रणधीर और प्रेममोहिनी

नाटक ।

लाला श्रीनिवासदास

लिखित ।

प्रकाशक—

हिन्दी-साहित्यसम्वर्द्धिनी समिति

१८ नं० मल्लिक स्ट्रीट,

कलकत्ता ।

वै० सं० १९७२

दूसरी बार २२०० प्रतियां] [मूल्य ।) आने ।

निवेदन ।

अच्छा और सच्चा साहित्य प्रकाश करनेके लिये इस समितिका जन्म हुआ है। अबतक इसकी जो पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं उनमें सस्तेपनका आवश्यकतासे अधिक ध्यान रखा गया है। अबसे सस्तेपनके साथ साथ विषयकी ओर विशेष ध्यान दिया जायगा। रणधीरप्रेममोहिनी नामक नाटक शिक्षाप्रद है, इसीसे यह प्रकाशित किया गया है। लाला श्रीनिवासदासने अपने अनुभवकी बहुत सी बातें इसमें लिखी हैं और यह अपने ढंगका सबसे निराला नाटक है। सर्व साधारण जिसमें इससे लाभ उठा सकें इसलिये बाबू हरचन्दराय गोवर्धनदासके फर्मके मालिक बाबू ज्वालाप्रसादजी ठंठनियाने इसके प्रकाशनार्थ समितिको २५०) दिये हैं। अतएव इसका सब श्रेय उन्हींको प्राप्त है और इसके निमित्त समिति उन्हें विशेष धन्यवाद देती है।

निवेदिका,

साहित्य सम्बर्द्धिनी समिति।

॥ श्री ॥

पात्रपत्रियोंका परिचय ।

पुरुष ।

रणधीरसिंह—पाटनका महाराजकुमार और नाटकका नायक ।

सुखवासीलाल--कायस्थ, रणधीरसिंहका मुंशी ।

नाथूराम--बनिया, रणधीरसिंहका मोदी ।

चौबे--रणधीरसिंहका आश्रित विदूषक ।

जीवन--रणधीरका सचा सेवक ।

सोमदत्त--रणधीरका शिक्षक और ज्योतिषी ।

रिपुदमन--सूरतका महाराजकुमार और प्रेममोहिनीका भाई ।

सूरतका महाराज—नयिकाका पिता ।

पाटनका महाराज--नयकका पिता ।

मंत्री, सेनापति इत्यादि ।

स्त्री ।

प्रेममोहिनी--सूरतकी महाराजकुमारी और नाटककी नायिका ।

चम्पा और मालती—प्रेममोहिनीकी सखियां ।

सरोजिनी—वेश्या ।

नाटककारकी जीवनी।

लाला श्रीनिवासदास जातिके वैश्य थे। उनके पिताका नाम लाला मूंगेलालजी था। वे मथुराके सुप्रसिद्ध सेठ लक्ष्मीचंदजीके प्रधान मुनीव थे। कहनेको तो वे मुनीव थे पर वास्तवमें वे सेठजीके दीवान थे। वे दिल्लीकी कोठीके कारिंदे थे और वहीं रहते थे।

लाला श्रीनिवासदासका जन्म संवत् १९०८ सन् १८५१ ई० में हुआ था। ये बाल्यावस्था हीसे बड़े शीलवान, सदाचारी और चतुर थे। इन्होंने आरम्भमें हिन्दी और फिर उर्दू, फारसी, संस्कृत और अंगरेजी आदि भाषाओंमें अभ्यास करके शीघ्र ही अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली।

लाला श्रीनिवासदासने छोटी उम्रमें बड़ी योग्यता प्राप्त कर ली थी। महाजनी कारोवारमें तो इन्होंने ऐसी दक्षता प्राप्त कर ली थी कि केवल अठारह वर्षकी अवस्थामें दिल्लीकी कोठीका सारा कारोवार हाथोंहाथ संभाल लिया। इनकी ऐसी योग्यता देखकर पंजाव प्रान्तकी गवर्नमेंटने इन्हें म्युनिसिपल कमिशनर बनाया और आनरेरी मजिस्ट्रेटकी पदवी प्रदान की। इनकी जैसी रीझ बूझ सरकारमें थी वैसी ही बिरादरीवाले और शहरके महाजन लोग भी इनको मानते थे।

लाल श्रीनिवासदासको दिल्लीकी कोठीका कारवार करनेके अतिरिक्त इधर उधर दौरा करके और और कोठियोंकी भी देखभाल करनी पड़ती थी, इससे इन्हें अपनी बुद्धिको परिमार्जित करनेका और भी अच्छा अवसर हाथ लगा। इन्हें मातृभाषा

हिंदीसे स्वाभाविक प्रेम था। आप जहां कहीं बाहर जाते और वहां कोई हिंदीका लेखक या रसिक होता तो उससे अवश्य ही मिलते। यदि इनके यहां कोई हिंदीका गुणग्राही जाता तो सब काम छोड़कर उससे बड़े प्रेमसे मिलते और उसका अच्छा सत्कार करते थे।

एक वार आप पंडित प्रतापनारायण मिश्रके यहां मिलने गये और बड़ी नम्रतापूर्वक इन्होंने उन्हें एक मोहर नजर करनी चाही। इसपर पंडित प्रतापनारायण वेतरह विगड़े और बोले आप हमारे पास अपनी धनकी गरूरी बतलाने आये हो। इसके उत्तरमें इन्होंने नम्रतापूर्वक हाथ जोड़कर उत्तर दिया कि नहीं महाराज मैं तो मातृभाषाके मन्दिरपर अक्षत चढ़ाता हूं।

लाला श्रीनिवासदासको हिंदीसे बड़ा प्रेम था और इसकी सेवा करनेका बड़ा उत्साह था, परन्तु कामकाजके झंझटके कारण इन्हें अवकाश बहुत कम मिलता था। इस लिये इनके लिखे हुए सप्तासंवरण, संयोगितास्वयंवर, रणधीरप्रेममोहिनी, और परीक्षागुरु ये ही चार ग्रंथ हैं, पर फिर भी यह चारों ग्रंथ एकसे एक बढ़कर हैं। परीक्षागुरुमें इन्होंने जो एक साहूकारके पुत्रके जीवनका दृश्य खींचा है उसे देखकर स्पष्ट प्रगट होता है कि इन्हें संसारिक व्यवहारोंका कैसा अच्छा अनुभव था।

खेदके साथ कहना पड़ता है कि लाला श्रीनिवासदास केवल ३६ वर्षकी अवस्थामें संवत् १९४४ (सन् १८८७ ई०) में कालकवलित हुए। यदि ये कुछ दिन और रहते तो हिन्दीभाषाकी बहुत कुछ सेवा करते। इनका चरित्र और स्वभाव आदर्श मानने योग्य है। (हिन्दी-कोविदरत्नमाला)

रणधीर और प्रेममोहिनी

नाटक ।
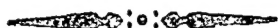
प्रथम अंक

प्रथम गर्भाङ्क ।

स्थान, सूरतका राजमहल ।

{ चम्पा पान लगाकर पानदानमें रखती है और मालती प्रेममोहिनीकी रत्नजटित प्रतिमा लेकर आती है । }

चम्पा—(देखकर) प्यारी ये क्या लायी ? क्या प्रेममोहिनीकी प्रतिमा है ? आहा ! ये तो बड़ी सुन्दर ! इसका मुख देखो मानो अभी हंस पड़ेगी, देखें, इसको यहां लाना । (हाथमें लेकर) सखी ! इसका रचनेवाला ब्रह्मासे क्या कम है ! इसकी लाज भरी चितवन, रस भरे होठ और हास्य भरे कपोल, कैसे सुहावने लगते हैं !!!

मालती—बस बहन ! क्षमा करो, तुम्हारी परख मैंने देख ली । तुम इसकी इतनी बड़ाई करती हो पर मुझको तो प्रेममोहिनीके आगे ये कुछ भी नहीं जचती । उसको दैवने अनुपम बनाया है । उसके सुभावकी लायकी और चतुराई तो अलग रही, उसके मुखकी ज्योति पलपलमें, चन्द्रकलासी बढ़ती है । उसके शरीरकी लावण्यता

से, एक एक गहनेके, तीन तीन, चार चार रूप दिखायी देते हैं। उसके शरीरकी सुगन्धिसे भौंरे मतवाले होकर गूंजते हैं, सो इसमें कहांसे आवेंगे?

प्रेममोहिनी—(आकर, दूरसे इनको देख मनमें) सखी है तो क्या हुआ, दो जनोंके बतलावनके बीचमें जाना मुनासिब नहीं। (कुछ हटकर खड़ी हुई)

चम्पा—भला प्यारी! तू जीती, मैं हारी; पर ये तो बता, महाराजने ये प्रतिमा किस लिये बनवायी है?

मालती—बलिहारी! अबतक यह भी नहीं मालूम! प्रेममोहिनीके स्वयंवरमें शस्त्रविद्याकी परीक्षाके बीच जो वीर रणधीर ठरेगा उसको उसी समय ये प्रतिमा दी जायगी।

प्रेममोहिनी—(सुनकर मनमें) यह तो मेरे स्वयंवरकी चर्चा कर रही है, इन बातोंके सुननेमें क्या डर है! हां मैं इनके पास जाउंगी तो ये चुप हो रहेंगी या मेरी मनसुहाती बातें करने लगेंगी, इस लिये छिपकर इनके मनकी बातें सुनूं। (एक किनारे खड़ी हो गयी)

चम्पा—भला, परीक्षामें तो कोई न कोई अवश्य जीतेगा पर राजकुमारीके समान बर मिलना तो बहुत कठिन है।

मालती—सखी! यह न कहो, परमेश्वरकी माया अपरम्पार है, उसने चन्द्रमाको तारोंसे अधिक बनाया है, पर सूरजसे नहीं।

चम्पा—सखी! राजकुमारीसे अधिक रूपवान और गुणवान भी कोई होगा?

मालती—क्यों नहीं। मेरा तेरा जी एक है, इस लिये कहती हूं तूने रणधीर कुमारको देखा है? सखी! उसको स्मरण करते ही शरीरके रोम खड़े हो जाते हैं। उसका सब अङ्ग सांचे ढाल बना है। मैंने तो ऐसी सजधजका जवान सब उमरमें कभी नहीं देखा था। जिस समय वह अपने "पवनवेग" घोड़ेको किलेके मैदानमें फेरकर अपना

कर्तव दिखाता है, उस समय, और राजकुमार उसकी फुर्ती देख, चकित हो, चित्र बन जाते हैं। उसके शरीरमें चुस्त पोशाक ऐसी जमकर बैठती है कि बहुतसे राजकुमार उसकी नकल करते हैं। जिस समय उसके मनोहर मुखकी रसभरी मुसकान और झलकते नेत्रोंकी मदमाती चितवन, मेरे ध्यानमें आती है, मेरी तो सुध-बुध ठिकाने नहीं रहती। मैं उसकी अलबेली छवि कहांतक वर्णन करूं; सब नगर उसकी मोहिनीमूरत देख मोहित हो रहा है।

चम्पा—इसमें सन्देह नहीं, सब नगरनिवासियोंके मनमें उसकी प्रेम छाप हो गयी, परन्तु राजकुल निश्चय हुए बिना तो वह राजकुमारीके लायक नहीं ठहर सकता।

प्रेममोहिनी—(मनमें) यह बातें मैंने क्यों सुनी ! मनुष्यका मन एक सरोवरके समान है; जैसे सरोवरमें तारे, आकाश, चन्द्रमा, वृक्ष और पर्वतादिककी अनेक परछांही पड़ती है, उसी तरह मनुष्यके मनमें भी अनेक बातोंका ध्यान बना रहता है और जैसे सरोवरमें एक कङ्करी डालनेसे वह परछांही बिगड़ जाती है इसी तरह मनुष्यके मनमें भी किसी बातका नया विचार आनेसे पहलेके सब विचारोंमें हलचल पड़ जाती है। हा ! यह सब जाननेका दुःख है, जो इस बातकी भनक मेरे कानतक न पहुंची होती, तो मुझको इस पञ्चायतीसे क्या काम था। (आगे बढ़कर प्रकटमें) सखी, क्या कर रही हो ?

मालती—तुमारी चर्चा।

प्रेममोहिनी—ठीक, "मेरा तेरा जी एक" थोड़े ही है, जो तू मुझसे अपने मनकी बात कहेगी।

मालती—(मनमें) इसने हमारी बातें सुन ली या योंही मेरी कहन इसके मुंहसे निकल गयी, कुछ भी हो, अब इस ढबसे बात करनी चाहिये, जिसमें पीछे झूठा न होना पड़े। (प्रकटमें) राजकुमारी हम तुम्हारे आधीन हैं। तुम्हारे दुःख सुखसे हमको दुःख

सुख होता है, पर हमको "एकजी" कहनेका अधिकार नहीं, (मुस्कुराकर) हां, भगवान करेगा तो थोड़े दिनमें ही यह कहनेवाला भी मिल जायगा !

प्रेममोहिनी—चल, हंसीमें बात न डाल। सच कह तू किसकी "चर्चा" कर रही थी।

मालती—तुम्हारी और तुम्हारी प्रतिमाकी।

प्रेममोहिनी—(मनमें) प्रतिमाके बहानेसे यह उसे जताती है पर संकोचके मारे खुलकर नहीं कहती, अच्छा अब इसे भुलावा देकर पूछना चाहिये। (प्रकटमें) क्यों सखी ! यहां इस समय कितने राजकुमार आये हैं ?

मालती—क्या कहूं ? सैंकड़ों (राजकुमार) आ चुके हैं, और अबतक आनेके तारमें हैं।

प्रेममोहिनी—भला, इनमें कोई मेरे लायक भी है ?

मालती—सो मैं नहीं कह सकती। शोभाका एक आकार नहीं हो सकता, जो जिसको सुहावना लगता है, वह उसीको रूपवान समझता है।

प्रेममोहिनी—अच्छा, तुझको कौन सुहावना लगता है ?

मालती—तुम।

प्रेममोहिनी—और रणधीर ?

मालती—सो तो परीक्षाके दिन निश्चय होगा।

प्रेममोहिनी—(मनमें) इसकी पेचीली कहनसे दर्पनकी परछांईके समान अर्थ समझमें आता है, पर यह पकड़में नहीं आती। (प्रकटमें) सखी ! चन्द्रमा छिपायेसे नहीं छिपता ? मैं तेरे मुखसे "रणधीर"का सब हाल सुन चुकी हूं।

मालती—मुझको नहीं मालूम था कि तुम्हारे मनको भी उस चन्द्रमाने "चन्द्र-कान्ति मणि" बना लिया !

प्रेममोहिनी--(लजाकर) नहीं सखी, मैं मोहित नहीं हुई, जैसे दूजके चन्द्रमाको संसार "पुण्य दर्शन" समझकर देखता है, वैसे ही रणधीरसिंहको एकबार देखनेकी मेरे मनमें इच्छा है। परन्तु मैं सुभावकी परीक्षा किये विना प्रीति नहीं किया चाहती; क्योंकि गुणकी प्रीतिके समान रूपकी प्रीति मनमें नहीं होती, केवल आंखोंमें रहती है, और रूप घटने अथवा उसके अधिक मिलनेपर वो तत्काल घट जाती है।

मालती--भगवान करे, यह इच्छा योंहीं रहे।

चंपा--क्यों सखी, क्यों? तू क्या राजकुमारीकी प्रसन्नतासे दुःखी होती है?

मालती--ना, दुःखी नहीं, सुखी होती हूं; पर सच्ची प्रसन्नतासे सुखी होती हूं। राजकुमारी रणधीरको देख कर मोहित हो जाय और महाराज किसी दूसरे राजकुमारका निश्चय करें तो अच्छा नहीं। रणधीर निस्सन्देह रणधीर है और उसकी फुर्तीसे उसकी यह विद्या द्रोणाचार्यने सिखायी हो ऐसा जाना जाता है। परन्तु जीत किसीके हात नहीं, यह वहुधा (१) नालायकोंको मिल जाती है और लायक मुंह ताकते ही रह जाते हैं, इससे कोई वात निश्चय न हो तवतक, राजकुमारीकी इच्छा योंही रहे तो अच्छी वात है।

प्रेमगोहिनी--हां मालती, सच कहती हो। भली वुरी दरसावे सोही हितू गिना जाता है। इसने मुझे चेताया तो मुझको रणधीरकी धीरतासे क्या? मैं तो राधीन हूं।

चंपा--राजकुमारी! पूजनका समय हो गया, चलो इसमें देर न होनी चाहिये। देवताओंकी कृपासे तुम्हारी सव इच्छाएं पूरी होंगी।

मालती--(घण्टेकी टकोर सुनकर) देखो, घण्टा भी गवाही देता है।

प्रेममोहिनी--(मनमें) ऐसा ही हो।, मैं पिताकी आज्ञाको उच्च मानती हूं। पर मेरा मन भूलसे एकबार रणधीरकी तरफ जा चुका, इस कारण अब मुझको औरोंसे प्रीति करते लज्जा आती है। (सब जाती हैं)

इति प्रथम गर्भाङ्क।

---*---

द्वितीय गर्भाङ्क ।

स्थान, पर्वतकी कन्दरा ।

(रिपुदमन वीर वेशसे आया ।)

रिपुदमन--(मनमें) इस सुहावने पर्वतमें पक्षियोंके कोलाहलसे कान पड़ी आवाज भी नहीं सुनायी देती, और वृक्षोंकी हरियालीके बीच निर्मल झरनोंका जल सूर्यकी किरणोंसे मिलकर नयी शोभा दिखाता है, चारों तरफ पशु-पक्षी आनन्दसे किलोल कर रहे हैं, पर अबतक कोई सिंह शिकारके लिये मेरे सन्मुख नहीं आया ; (आगे सिंहको सोते देख, पैरसे पूंछ दवाकर) उठ गीदड़, बैरीके आये पीछे निशङ्क होकर क्या सोता है ?

(सिंह क्रोधसे उठकर रिपुदमनकी तरफ झपटा रिपुदमनने फुर्तीसे तलवार निकाल, उसपर वार किया पर वो वार खाली गया और यह अपने जोरसे आप धरती पर गिर पड़ा ।)

रिपुदमन—(मनमें शोकसे) मुझे अपने मरनेका कुछ भय नहीं, जिसने जन्म लिया है वह एक दिन अवश्य मरेगा, पर मनुष्य देह पाकर जो काम करना चाहिये सो मुझसे नहीं बन पड़ा, यह पछतावा मैं अपने संग ले जाता हूं । अच्छा, अब तो केवल ईश्वरके स्मरण करनेका समय है ।

(सिंहने पंजा उठाया पर अचानक रणधीरने एक कोनेसे निकलकर सिंहके पेटमें ऐसी कटार मारी जिससे वह वेसुध होकर गिर पड़ा ।)

रणधीर--(मनमें) भगवान्‌की कृपासे इस वीरके प्राण बचे सो अच्छा हुआ । पर अब यह मुझको यहां देखकर वृथा लजावेगा । (जाने लगा)

रिपुदमन--(आश्चर्यसे मनमें) मैंने कैसी अचरजकी बात देखी ! क्या अवतक मेरा मन ठिकाने था, इस वीरने किस कारण अपने प्राण झोक कर मेरी रक्षा की ? और रक्षा भी की तो मुझसे विना मिले क्यों चला ? इस कलिकालमें किसीसे कोई अच्छा काम वन जाता है, तो वह जन्म भर अपनी वड़ाई मारता है। फिर जो मनुष्य इतना वड़ा काम करके कुछ न जतावे, उसको साधारण आदमी कैसे समझूं ! मेरे मनमें इस वीरसे प्रीति करनेकी वड़ी चाहना है, पर ऐसे सज्जन खुशामदकी वातोंसे कभी प्रसन्न नहीं होते। इस कारण पहले इनसे छेड़छाड़की वाते करूं ; (प्रकटमें रणधीरसे) आपके कामसे आप क्षत्री जाने जाते हो, पर आपने मेरे निशानेपर शस्त्र चलाया सो अच्छा नहीं किया।

रणधीर--(फिरकर, मुसकुराते हुए) मेरा ध्यान इस वात पर न था।

रिपुदमन--तो इसके वदलेमें आपको अपना निशाना वनाऊं ?

रणधीर--निस्संदेह।

रिपुदमन--अच्छा, तो मैं आपके मनको अपना निशाना वना कर प्रेम वाण छोड़ता हूं।

रणधीर--पर ये शिकार तो शिकारीके शिकार हुए विना हात नहीं आती। (अर्थात दूसरेके मनमें अपनी प्रीति उत्पन्न करनेके पहले अपने मनमें उसकी प्रीति करनी चाहिये।

रिपुदमन--सो मैं तो पहले ही अपने शिकारके साथ आपका शिकार हो चुका, पर आपके मनको अपना शिकार वनानेके लिये मेरी सामर्थ्य नहीं है।

रणधीर--समर्थवानोंके कहनेकी यही रीति होती है :--

दोहा। गरजै सो वरसै नहीं, शरदजलद अनुमान।
वरसै सो गरजै नहीं, वर्षा मेघ समान ॥ १ ॥

रिपुदमन—यह तो चंदनकी बड़ाई है जो अपने आसपासके वृक्षोंको अपनी बराबरके बना लेता है ; भला यह सुखदाई चन्दन कौनसे बागकी रमणीक भूमिमें शोभायमान है। (अर्थात आप कहां रहते हैं ?)

रणधीर—इसकी पोद थोड़े दिन पहले एक मनोहर बागसे उखाड़कर सूरतमें लगायी गयी थी।

रिपुदमन—अच्छा, उस बागका नाम क्या है ?

रणधीर—(मनमें) अब क्या जबाव दूं ; झूट बोलना मुनासिब नहीं और सच कहनेमें बिगाड़ होता है ; (विचार कर प्रकट) पाटलकी पिछली तिहाई न होनेसे, उसका नाम आपको मालूम होगा।

रिपुदमन—(मनमें) इनके इस वचनका अर्थ इस समय समझमें नहीं आता, कदाचित विचारनेसे आ जाय, पर न आवे तो भी इनसे पूछना तो मुनासिब नहीं, क्योंकि इनको समझाकर कहना होता तो पहले ही लपेटकर क्यों कहते ; (प्रकट) मुनासिब हो तो कृपा करके आप अपना नाम और बता दें।

रणधीर—अच्छा, इस अंगूठीसे आपको मेरा नाम मालूम होगा। (अपनी अंगुलीसे अंगूठी उतार दी।)

रिपुदमन—(अंगूठी ले, रणधीरका नाम बांच हर्षसे) आहा ! बड़ा अच्छा हुआ "यथा नामः तथा गुणः" के सिवाय इनमें आदि और अन्तका एकसा आकार देखकर मेरा मन हर्षसे उछलता है, मैं भी ऐसे ही सज्जनसे प्रीति किया चाहता था ; (अंगूठी पहर ली)।

रणधीर—और प्रीति हो भी गयी ?

रिपुदमन—निस्सन्देह, जब आपने कृपा करके अपनी अंगूठी मुझको दे दी, तो प्रीति होनेमें क्या सन्देह रहा।

रणधीर--पर मैं तो अबतक आपके नाम गामसे अजान हूं।

रिपुदमन--अच्छा, ये मेरी अंगूठी आप लीजिये। (अपनी अंगूठीके बदले भूलकर रणधीरकी अंगूठी उतार दी।)

रणधीर--(अपनी अंगूठी देखकर मनमें) यह बड़ी अच्छी बात हुई जो इन्होंने भूलकर अपनी अंगूठीके बदले मेरी अंगूठी उतार दी, इनका नाम तो अब नहीं, दो घड़ी पीछे मालूम हो जायगा पर ये अंगूठी किसी समय बड़े काम आवेगी ; (प्रकट) किसी काममें जल्दी करनी अच्छी नहीं होती, देखो, जो लोग जल्दी कर कच्चा फल तोड़ लेते हैं, उनको फलका तो स्वाद मिलता ही नहीं पर बीजका नाश वृथा हो जाता है।

रिपुदमन--(उदास होकर) आप जानों आपका काम जाने मैंने तो अपने मनमें आपसे सच्ची प्रीति कर ली।

रणधीर--यही तो पेंच है, जबतक आपके मनमें मेरी तरफसे कुछ सन्देह रहे, अथवा आप मुझसे कठोर और कपटी रहे, तबतक मैं आपसे अन्तर रक्खूं, अपना भेद छिपाऊं तो चिन्ता नहीं, पर आप मुझसे निरन्तर प्रीति करें और मैं आपसे अपने मनकी बात न कहूं ; ये बातें मेरे स्वभावसे उलटी हैं।

रिपुदमन--तो आप विश्वास रक्खें जो लोग बिना जानें पहचानें आपसमें मिल बैठते हैं, उनसे मैं ज्यादा सच्चा निकलूंगा।

रणधीर--संसारमें किसी तरहके प्रयोजन बिना कोई किसी काममें प्रवृत्त नहीं होता. पर जो लोग लौकिक चतुर हैं, वे आदिमें दूसरेसे मिलते ही अपना कुछ प्रयोजन नहीं जताते, प्रीति हुए बाद दूसरेपर सब तरहका बोझ डालकर अपना प्रयोजन प्रकट करते हैं, उस समय संकोचमें आकर या तो दूसरेको उनका

प्रयोजन सिद्ध करना पड़ता है या दोनोंमें परस्पर बिगाड़ हो जाता है। ऐसे संकोच अथवा बिगाड़ होनेके बदले आदिमें प्रीति करनेवालेका प्रयोजन समझ लिया जाय, और उसका काम हो सके तो उसके कहनेसे पहले कर दिया जाय न हो सके तो उसको पीछेके लिये धोखेमें न रखा जाय; ये बातें मेरी रायमें अच्छी हैं। आप इस बातको कैसी समझते हैं?

रिपुदमन—आपका यह विचार बहुत अच्छा है परन्तु मैं इस समयतक आपकी सच्ची प्रीति सिवाय और कुछ नहीं चाहता, आपने मेरी प्राण रक्षा की और आपके स्वाभाविक गुण देखकर मेरा मन मोहित हो गया, इस कारण मैं आपसे केवल प्रीति चाहता हूं।

रणधीर—निस्सन्देह, आपकी लायकी देखकर मेरे मनमें भी प्रीति उत्पन्न होती है।

रिपुदमन—हंसीमें कोई बात मेरे मुखसे निकल जाय तो आप क्षमा करें।

रणधीर—यह विचार तो दोनों तरफ रहना चाहिये क्योंकि स्नेह (१) से भरे हुए दीपकको भी पवनसे बुझनेका डर रहता है।

रिपुदमन—आपका इस पर्वतपर आना कैसे हुआ था?

रणधीर—मुझको अवकाश होता है तब वृक्षावलीमें ईश्वरकी रचना देखनेके लिये मैं यहां चला आता हूं। एक बीजसे वृक्ष उत्पन्न होना, उसमें एक तरहके हजारों पत्तोंका लगना, फूलोंका खिलना, बीजका मिलना, कुछ थोड़े अचरजकी बात नहीं है!

---

(१) तैल।

रिपुदमन—(एक गुलावके पुष्पकी तरफ देखकर) देखो! यह गुलावका फूल अपने रूप रंगके अभिमानसे ऐसा खिल रहा है मानों अपनी भेद मुस्कानसे वनके सब फूलोंकी हसींसी करता हो!

रणधीर—यह तो इसकी जड़ बुद्धि है क्योंकि ईश्वरके वागमें एकसे एक अच्छा फूल दिखायी देता है और इसी रंगके वहुतसे गुलाव लग लगकर सूख चुके हैं, फिर इसकी सुगन्धिसे पवन सुगन्धित न हुई तो इसने दो दिनकी अनित्य शोभापर वृथा अभिमान करके क्या किया?

रिपुदमन—आहा! वातों ही वातोंमें सन्ध्या हो गयी, देखो वह सामनेका वृक्ष जो घड़ी भर पहले सूर्य्यके तेजसे झलक रहा था, सूर्य्यके अस्त होनेसे अपने आप मलीन हो गया।

रणधीर—मनुष्यके उदय अस्तका भी यही हाल है वह सदा अपनी वढ़ती चाहता है पर उसका नफा नुकसान होनहारके अधीन रहता है, ओहो! (मुखपर उदासी छा गयी।)

रिपुदमन—देखो, संसार दुःखरूप है, इसमें कोई दुःख नहीं चाहता, परन्तु दुःख वारंवार सवके ऊपर आ पड़ता है और दुःखका अभावमात्र सुख समझा जाता है, होनहार किसीके रोके नहीं रुकती, इस कारण बुद्धिमान दुःख सुखको अनित्य समझकर सदा एकसे रहते हैं। चलिये अव सांझ हुई, मैं आपके स्थानपर होकर अपने मकानको जाऊंगा।

रणधीर—(मनमें) हमारी मर्जी मूजव तो इनका सत्कार यहां कहां वन पड़ेगा? (प्रकट) अच्छा, चलिये मित्रको अपने घर जिमाने और आप उसके घर जीमने, अपने सुख दुःखकी वात उससे कहने और उसके सुख दुःखकी वात सुननेसे सदा प्रीति वढ़ती है; (मनमें) जव इनसे प्रीति करनी ठेरी तो पहले

इनका स्वभाव जानना चाहिये क्योंकि जिसमें जिसका स्वभाव मिलता है उसमे उसको प्रीति होती है आज इनके आगे हंसी चोहलकी बातें कर, गानेकी चर्चा छेड़, शास्त्रका प्रसङ्ग ला, इनके मनकी रुचि परख लें (चलते हुए प्रकट) हमारे यहां एक चौवे हास्यरसमें बड़े कुशल हैं उनकी बातें सुनकर आप हंसते हंसते लोट जायंगे ।　　　　[दोनो गये]

इति द्वितीय गर्भाङ्क ।

———*———
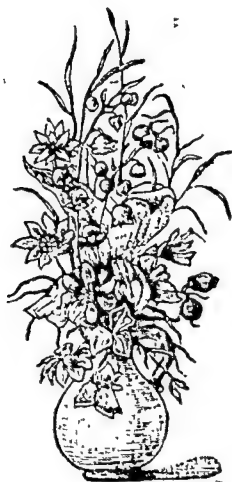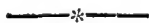
अथ तृतीय गर्भाङ्क ।

स्थान, रणधीरसिंहका महल ।

(सुखवासीलाल और नाथूराम बैठे हैं)

सुखवासीलाल---सेठजी ! तुम्हारे किन लोगोंकी रहंटी हैं ? (१)

नाथूराम---(हात जोड़कर) अन्दाताजी ! मैं तो माल्यांरी वली करूं छूं । (२)

सुखवासीलाल---ब्याज क्या लेते हो ?

नाथूराम---दसका बारा कर, रप्या महीना री खंदी, लिया करांछा । (३)

सुखवासीलाल---लेकिन चार उतरे पीछे दो देकर दसके बारह कर. लेते हो, इसके गायलेकी क्या हद !

नाथूराम---(सिर पिटा कर) हैं, अन्दाता योतो म्हरो धंदोई ठैरो । (४)

सुखवासीलाल---तुम्हारा यह धन्धा है कि भोले आदमियोंको फुसलाकर दोके चार कर लो । (५)

नाथूराम---(मनमें) आप तो मूंडामें मूंग घाल्या बैठा छै । (प्रकट) मैं अन्दाता देसी स अपनी गरज से देसी म्हारा कह्यां कुण देवै छै । (६)

सुखवासीलाल---तुमको देशसे आये कितने बरस हुए ?

---

(१) तुम्हारे किन लोगोंका लेन देन है ?

(२) अन्नदाता ! मैं मालियोंका लेन देन करता हूं ।

(३) दसके बारह करके रुपये महीनेकी किश्त लिया करते हैं ।

(४) अन्नदाता यह तो हमारा रोजगार ही ठैरा ।

(५) तुम्हारा यह रोजगार है कि भोले आदमियोंको बहकाकर दोके चार कर लो ।

(६) (मनमें) आप तो मुंहमें मूंग (इसतरफ वाले कहते हैं "सोना") डाले बैठे हैं (प्रगट) यहीं अन्नदाता देगा सो अपनी गर्जसे देगा हमारे कहनेसे कौन देता है ।

नाथूराम—हणें कोई साढीक बारा वर्ष हुआ होशी। (१)

सुखवासीलाल—तुम्हारे बाल बच्चे कहां हैं ?

नाथूराम—देसमें, अठै ल्याऊं तो उठारो रहवास छूट जाय। (२)

सुखवासीलाल—(मनमें) ये लोग भी एक किस्मके वहशी हैं, इनसे दुनियांके लोगोंको किसी तरहका फायदा नहीं पहुंचता और ये दुनियांके लोगोंसे कुछ हज नहीं उठाते, नाशिस्त बरखास्त और खुरो नोशकी इनको मुतलक तमीज नहीं, बस तमैंकी अन्धेरी चढ़ाकर, तेलीके बैलकी तरह तमाम उम्र गैर मुल्कोंमें फिरते हैं और हशरातुलअर्जकी तरह, हर शहर व कस्बेमें नजर आते हैं ; सर्राफी, बजाजी, गुमस्तहगरी, दल्लाली, गल्ले फरोशी वगैरह हर किस्मके रोजगारमें इनका कदम अड़ रहा है, मगर दुनियांके मुल्की व खानगी मामलातसे ये महज नावाकिफ हैं और इल्मकी रहनुमाई वगैर, गोहरे मुरादका दस्तयाब होना भी आसान नहीं ; (प्रकट) तुम अपनी औलादको बचपनमें इल्म सिखानेकी कोशिश क्यों नहीं करते ? (३)

---

(१) अबतक कोई साढे बारह बरस हुए होंगे।

(२) देशमें (हैं) यहां लाऊं तो वहांका रहना छूट जाय।

(३) (मनमें) ये लोग भी एक तरहके जंगली हैं इनसे संसारके लोगोंका कुछ हित नहीं होता और ये संसारके लोगोंसे कुछ सुख नहीं उठाते, बैठने, उठने और खाने पीनेका इनको कुछ विचार नहीं, बस लालचकी अंधेरी चढाकर तेलीके बैलकी तरह जन्मभर परदेशमें फिरते हैं और चौमासेके जीव जन्तुकी तरह हर एक नगर और गांवमें दिखायी देते हैं ; सराफी, बजाजी, गुमास्तागीरी, दलाली नाजकी बिक्री आदि हर तरहके रूजगारमें इनका पांव अड़ रहा है परन्तु संसारमें देश और गृहस्थके काम काजसे ये लोग बिलकुल अजान हैं और विद्याके मार्ग बताये बिना कामनाके मोतीका हाथ लगना भी सहज नहीं, (प्रकट) तुम अपनी सन्तानको बालक पनमें विद्या ही पढ़ानेका उद्योग क्यों नहीं कराते।

नाथूराम—कागद पत्तर, लेखो, जोखो. नकल जमा खर्च तो सगलाई भणे छै, पिण जिकेरी बुद्ध तीखी हुवे सो तो गीता और सहस्सर नांव भी भण लेवै छै, इणसे विसेस भणकर क्या करां ? टीपणों वाचणों नहीं, कथा सुनाणी- नहीं, मौलवी वणनों नहीं, खत लिखणों नहीं ; म्हारे भाणजारो सालो हिम्मतराम चौरटियो सैंस्कृत भण गयो, छोसं रुजगार धन्दाईसै जातो रह्यो ! (१)

सुखवासीलाल— (मनमें) ऐसे जाहिलोंका खुदा हाफिज, (२) (प्रकट) क्यों तुम्हारी तरह वह झूठे वहीखाते तो न वनाता होगा ?

नाथूराम— (कुछ तेज होकर) अन्नदाताजी ! या वात आपका फुर्मावा लायक नही छै, गांव् गोठांरा वोरा में कोई धरम हार, इस्यो काम भलांही कर लो, म्हे लोग मरता मरज्यास्यां तो पण, म्हासै खोटो कागद कदे नहीं वणायो जासी। सोदो सही करां पीछे हजारां रुप्यांरो घाटो होसी तोही कच्ची जवान कदी नहीं निकालांगा, इस्यो काम करां तो म्हारी एक दिनमैं साख जाती रहै। (३)

सुखवासीलाल—नहीं सेठजी, खफा न हो ; मैंने यह वात तो दिल्लगीके वास्ते कह दी थी, लेकिन आप यह वताइये कि आपके भांजेका साला रोजगार धंन्धेसे क्यों जाता रहा ;

---

(१) कागज पत्र, हिसाव किताव, नकल जमाखर्च तो सब पढ़ते हैं जिसकी बुद्धि तीक्ष्ण हो सो तो गीतो और सहस्र नाम भी पढ़ लेता है, इसमें विशेष पढ़कर क्या करें। पञ्चांग वाचना नहीं, कथा सुनानी नहीं, मौलवी वनना नहीं, खत लिखना नहीं हमारे भानजेका साला हिम्मतराम चौरटिया संस्कृत पढ़ गया था, सो रोजगार धन्देहीसे जाता रहा।

(२) ऐसे मूर्खोंका परमेश्वर रक्षक।

(३) अन्नदाता !-यह वात आपके फर्माने लायक नहीं है, गाव गवईके व्यवहारियोंमें कोई बेइमान ऐसा काम भले ही कर ले, हम लोग मरते मर जायंगे तोभी झूठा कागज कभी नहीं बनावेंगे, सौदा सही किये पीछे हजारों रुपयोंका नुकसान होगा तोभी कभी नहीं मुंह मोड़ेंगे ; ऐसा काम करें तो एक दिनमें हमारी साख जाती रहेगी।

नाथूराम—उणनैं पहली तो पोथीपानंडासे ही मौसर नहीं, फिर मीनत मजूरीरा कामसूं घबरावे, जिद रुजगार धन्दों कांकर होय ? मैं तो उणरो यो वित्तांत देख, अपना टाबरनें गुरूजी री पोशाल मांही नहीं जाणें दीनो छे। (१)

सुखवासीलाल—(मनमें) यह हमारे समझानेसे समझने लायक नहीं हैं, (प्रकट) अच्छा, हमारी सरकारका हिसाब लाये हो ?

नाथूराम—हां अनूदाता लायो हूं। (२)

सुखवासीलाल—कुल कितने रुपये जुड़े ?

नाथूराम—हणे घडो नहीं लगायो, (मनमें) पहली ही घडो वता देस्यूं तो पछै वडावारी गुंजास कठे रहसी। (३)

सुखवासीलाल—अच्छा, चिठ्ठियां लाओ ; अव्वल मुकावला कर लें।

नाथूरान—हाजर छे (चिठ्ठियां सुखवासीलालको देता है)

सुखवासीलाल—रोगन दर्ज कितना है ? (४)

नाथूराम—छम्मण, पानूसेर, पांच्छटांक। (५)

सुखवासीलाल—कैसे निर्ख लगाया ?

---

(१) उसको प्रथम तो पुस्तक पत्रोंके वाचनेसे ही अवकाश नहीं, फिर मिहनत मजदूरीके कामसे घबरावे तब रोजगारधन्धा क्योंकर हो। मैंने तो उसका यह हाल देख, अपने लड़केको गुरुकी पाठशालामें ही नहीं जाने दिया है।

(२) हां अन्नदाता लाया हूं।

(३) अबतक जोड़ नहीं लगाया (मनमें) पहले ही जोड़ बता दूंगा तो फिर बढ़ानेकी गुंजायश कहां रहेगी।

(४) रोगन कितना है।

(५) छः मन, पांच सेर, पांच छटांक ?

नाथूराम—अठैकी तोलसै सवा छः सेर, (मनमें) दो एक चीजमैं क्यूंक मन्दो भाव लगा दूं, आगानै भरोसो पड़ जासी, जिद वाकीरा सोदमैं मनमाण्यो नफो ले लेस्यूं। (१)

सुखवासीलाल—(मनमें) इसने इसमें तो वाजारके निर्खसे पाव सेर ज्याद: दिया। (प्रकट) अच्छा, आटा ?

नाथूराम—छत्तीस मण, दो सेर, तेरो छटांक। (२)

सुखवासीलाल—इसका निर्ख ?

नाथूराम—येरो भाव दो मण पनरा सेर। (३)

सुखवासीलाल—(मनमें) इसमें भी वाजारके निर्खसे पांच सेर ज्याद: आया। (प्रकट) वाकी चीजोंकी कीमत एक सुरत लिखा दो तुम्हारे हिसावमें हमको कुछ शक नहीं है। (४)

नाथूराम—(मनमें) अव दाव लगाणेरो वखत आयो, (प्रकट) जिसी मर्जी मालकांरी। (५)

(सुखवासीलाल लिखता है)

---

(१) यहांकी तोलसे सवा छः सेर, (मनमें) दो एक चीजमें कुछ मन्दा भाव लगा दूं आगेको भरोसा पड़ जायगा जव वाकी सौदेमें मनमाना नफा ले लूंगा।

(२) छत्तीस मन, दो सेर, तेरह छटांक।

(३) इसका भाव दो मन, पन्द्रह सेर।

(४) (प्रकट) चीजोंके दाम इकट्ठे लिखा दो तुम्हारे हिसावसे हमको कुछ सन्देह नहीं है।

(५) (मनमें) अव दाव लगानेका वक्त आया (जैसी मर्जी मालिकोंकी।)

नाथूराम--चार सो पैंतीस रूप्या, साढा पांच आनारो सोदो, मैं पनरा से रूप्या रोकड़ी। (१)

मुखवासीलाल--इसमें हमारी क्या नजर करोगे ?

नाथूराम—(मनमें) गायलो तो घणो ही छे, पिण पइली ही देणो मंजूर करलेवां तो इयरे मनमें सक पड़ जासी, (प्रकट) हैं अनूदाता इयमें तो म्हारे उलटो घाटो जासी पिण--(२)

मुखवासीलाल--नहीं सेठजी ! यह कुछ बात नहीं है, हमारा हक न दोगे तो तुम्हारे हिसावमें झमेला पड़ जायगा।

नाथूराम—इसीई मर्जी होय तो शगलाई आप राखो, अठै तो आछो परताप आपरो छै। (३)

मुखवासीलाल—नहीं, हम सबका क्या करें, हमको तो हमारा हक मिलना चाहिये।

नाथूराम--(उसकी मुट्ठीमें कुछ देकर) आपरे लायक तो नहीं छै पिण अबके समझ लीजो। (४)

---

(१) चार सौ पैंतीस रुपये, साढ़े पांच आनेका सौदा और पन्द्रह सौ रुपये नकद।

(२) गुंजायश तो बहुत है परन्तु पहलेहीसे देना मंजूर कर लें तो इनके दिलमें शक पड़ जायगा। (प्रकट) हैं अन्नदाता ! इसमें तो हमारे उलटा नुकसान पड़ेगा परन्तु——

(३) ऐसे ही मर्जी होय सब (रुपये) आप रखो यहां तो अच्छा प्रताप आपका है।

(४) आपके लायक तो नहीं है परन्तु अबके समझ लेना।

सुखवासीलाल---अच्छा, लेकिन किसीसे जिक्र न हो । रणधीरसिंहके मिजाजको तो तुम जानते ही हो, उनके आनेका समय हो गया चलो अब तुम्हारे हिसाबका जमा खर्च करा दें ।   (दोनों गये)

इति तृतीय गर्भाङ्क ।

---*---

अथ चतुर्थ गर्भाङ्क ।

स्थान, रणधीरसिंहका महल ।

(बीचमें गोल मेजपर एक दर्पण रखा है, लम्प जल रहा है,
चारों तरफ मखमली कुर्सियां रखी हैं, दर्पणके
सन्मुख चौबेजी एक कुर्सीपर
रज लगाये बैठे हैं ।)

चौबेजी—(दर्पणमें दूसरा चौबे समझकर) चोबेजू तुम राजी हो, मधपुरीते आये किते दिन भये ? हमारे घरहू गयेहे, हमारे छोरानैं तुमको अपनों बाबा तो नांय समझ लिओ, (डरकर मनमें) इनको यहां रहवे अच्छो नांहि । (प्रकट) भैय्या यहां का तन्त है तुम कहो तो हमहूं तुमारे सङ्ग परदेस चलें, तुमनें भांगहू पीईके नांहिं ? नांहिं पीई होइ तो हमारे पास लुगदी तय्यार है ; छान डारैं । (१)

(रणधीर और रिपुदमनका प्रवेश)

रणधीर—(आते ही शीसेको पलटकर) चौबेजी किससे बात कर रहे थे ?

चौबेजी—(चोंककर) आपनैं भलो सन्देह मिटाइ दिओ मैं तो जाकों दूसरो चोबे समझै हो ! (२)

---

(१) चौबेजी तुम राजी हो, मथुरासे आये कितने दिन हुए ? हमारे घर भी गये थे। हमारे लड़कने तुमको अपना बाबा तो नहीं समझ लिया । (डरकर मनमें) इनका यहां रहना अच्छा नहीं । (प्रकट) भाई यहां क्या सार है, तुम कहो तो हम भी तुम्हारे साथ परदेश चलें, तुमने भङ्ग भी पिया ! नहीं, नहीं पिये हो तो हमारे पास लुगदी (अर्थात् घुटी घुटाई भङ्ग) तय्यार है छान डालें ।

(२) आपने अच्छा सन्देह मिटा दिया मैं तो इसको दूसरा चौबे समझा था।

रणधीर--कहो भङ्ग बूंटी छन् गयी ?

चौवेजी--हां धर्म्मूरत ! मूंजीके नाम फोक फेंके वड़ी वेर भई । (१)

रणधीर--तो अब किस विचारमें हो !

चौवेजी--कछु नांय तूमको आइवेमें अवेर भई तब मेरे मनमें जे सन्देह भयो जो कहुं अपने घरको रस्ता तो नांय भूल गये । (२)

रणधीर--नहीं चौवेजी, मैंने क्या भङ्ग पी थी ?

चौवेजी--ना जिजमान, आपने भांग तो नांहि पी पर मोकों भांगके चढ़ाव में जे सूझी कि ज्वानी और धनके मद लों आप कहूं सरमदारको तमाशो देखवे तो नांहि चले गये ! (३)

रणधीर--आज तो आपने बड़े गहरे अमल पानी किये, कहिये इस समय आपमें और गऊके जायेमें कितना अन्तर है ?

चौवेजी--जित्तो आपके और मेरे वीचमें । (४)

रिपुदमन--भला महाराज शर्मदारके तमाशेका भेद तो वताइये ?

---

(१) हां धर्ममूर्त्ति ! मूंजीके नाम फोक (भङ्ग छने पीछेका फोक) फेंके वड़ी देर हुई ।

(२) कुछ नहीं तुम्हारे आनेमें देर हुई, इससे मुझको यह शक हुआ कि कहीं अपने घरका रस्ता तो नहीं भूल गये !

(३) नहीं जजमान, आपने भंग तो नहीं पी ; परन्तु मुझको भंगके चढ़ावमें यह विचार आया कि जवानी और दोलतके मदसे आप कहीं शर्मदारका तमाशा देखने तो नहीं चले गये ।

(४) जितना आपके और मेरे वीचमें ।

चौबेजी—जामें का भेद है, देखो एक लुगइय्या सुसरार में लाजके मारे अपनों बोलहू काहूको नांहि सुनावे पर गारी गाइवे बैठे तब सास सुसरको सैंकरन् गारी मोहकी मोंपै सुनाइदे। (१)

रिपुदमन—महाराज! आपका नाम क्या है?

चौबेजी—(कुएकी गूंजके समान) महाराज! आपका नाम क्या है?

रिपुदमन—मेरा नाम प्रसन्न मन रिपुदमन।

चौबेजी—मेरा नाम लड्डआ भंजन, चौबे निरंजन। (२)

रणधीर—चौबेजी, कुछ मेवा मिष्टान्न खाओगे?

चौबेजी—भला भैय्या, ऐसी बातन्को पूछवो का! (३)

(जीवनने अंगूरके तीन गुच्छे लाकर रिपुदमन, रणधीर,
और चौबेजीको दे दिये)

रणधीर—(अपने आगेके बीज चौबेजीके आगे खसकाकर हंसीसे) चौबेजी, ऐसी क्या जल्दी पड़ी थी जो बीजोंका इतना ढेर लगा दिया!

चौबेजी—तोहू आपकी भांत बीज समेत तो न खाये। (४)

(जीवन आकर स्थान शुद्ध कर गया)

---

(१) इसमें क्या भेद है, देखो एक स्त्री ससुरालमें लज्जाकी मारी अपना वचन भी किसीको नहीं सुनाती पर गीत गाने बैठती है तब सासु सुसरको सैकड़ों गाली मुंहकी मुंहपर सुना देती है।

(२) मेरा नाम लड्डू भंजन चौबे निरंजन।

(३) भला भाई, ऐसी बातोंका पूछना क्या!

(४) तो भी आपकी तरह बीज सुद्धा तो नहीं खाये।

रणधीर—(रिपुदमनसे प्रीतिपूर्वक) अभी थोड़ी रात गयी है मर्जी हो तो सितारसे थोड़ी देर मन बहलावें।

रिपुदमन—बहुत अच्छा, मैं ताल देता जाऊंगा।

रणधीर—(सितार लेकर)

राग कल्याण

देख्यो प्रेमको पन्थ जुदोही ॥ ॥ टेक ॥

जानैं प्रीति रीति रस चाख्यों, ताहि न भावत कोई,

दीपककी छवि लख पतंगनै, पंख आपनी खोई।

वेधत मधुप काठ पर हित कज, कमल न छेदत सोई,

जाकी प्रीति लगी काहूसों याकों जानत वोई ॥ देख्यों० ॥

(चौबेजीके नेत्रोंमें आंसू भर आये)

रणधीर—(चौबेजीसे) आज तो कुछ बड़ा प्रेम आया!

चौबेजी—ना जिजमान, प्रेम तो कछू भी नांहि आयो, तुमारी नार हलती देख कर मोको अपने बकराकी सूध आइ गई ही, ताते आखन् मैं अंसुआ भर आये (३)

रिपुदमन—चौबेजी! तुम भी तो कुछ गाओ।

चौबेजी—भैय्या, हमपै का गाइबो वजाइबो आवै है पर तुम कहो हो तो ल्यो एक धुरपद सुनाई दें। (४)

---

(३) ना जजमान, प्रेम तो कुछ नहीं आया, तुमारी गर्दन हिलती देखकर मुझको अपने वकरेकी याद आ गयी थी इससे आखोंमें आंसू भर आये।

(४) भाई! हमें क्या गाना बजाना आता है परन्तु तुम कहते हो तो लो एक धुरपद सुना देते हैं।

॥ प्रुपद ॥

पंडितन काजै सीखे भागवत ज्ञान गीता,
श्रोताहेत साध्यो सार वेदनको बांचवो ।
कविनके काजै सीखे पिंगल पुरान छन्द,
दोहा गाह चौपई कवित्तनको सांचवो ॥
कलाउन्त काजै भजन बारहमासी सीखलीनै,
आप मुख गावैं राग रागिनी न राचवो ।
देवेके काजै राजा इतनें कसब सिखे,
कसर रही है एक ताता थेई नाचवो ॥ १ ॥

जीवन—(आकर) महाराज ! पण्डित सोमदत्तजी आ गए क्या आज्ञा है ?

रणधीर—अच्छा उनको सत्कारसे लेआ । (उसके गए पीछे) देखो आज हंसी हंसीकी वातोंमें इतना समय वृथा चला गया, इतनी देर विद्या पढ़नेमें मन लगाते तो कितना लाभ होता । कालिदास और भवभूत्यादि कवियोंकी आयु साधारण लोगोंसे अधिक न थी, परन्तु वे समयकी महिमा जानते थे, इस कारण उनका नाम आजतक अमर है और असंख्य मनुष्य प्रति दिन जन्म लेकर मरते हैं जिनका नाम कोई नहीं जानता । हां, आठ पहरकी महनत करनेसे बुद्धि शिथिल हो जाती है, इस कारण आठ पहरमें घड़ी दो घड़ी मन बहलानेके वास्ते ऐसी भी चाहिये ; परन्तु सब लोगोंके आगे ऐसी वातें करनेसे तेज जाता रहता है ।

{ पण्डित सोमदत्तको आते देख, सबने उठकर प्रणाम किया और रणधीरसिंहने सत्कार करके उनको बीचकी कुर्सीपर बिठाया । }

रणधीर—(पण्डितजीसे हाथ जोड़कर) आज हमारे ये मित्र (रिपुमदनकी तरफ देखकर) कृपा करके यहां आए हैं इस कारण बहुत चर्चा तो न हो सकेगी, परन्तु नित्यका नेम निबाहनेके लिये थोड़ेसे प्रश्न करता हूं।

रिपुदमन—मेरे लिये आप कुछ संकोच न करें विद्या, तो मनुष्यकी आत्माका भूषण है इसकी बराबर आनन्द और कौनसी बातमें होगा।

रणधीर—(पण्डितजीसे) ईश्वरके मिलनेका मूख्य उपाय क्या ?

सोमदत्त—श्रद्धा।

रणधीर—प्रधान धर्म कौनसा ?

सोमदत्त—स्वधर्म।

रणधीर—अधर्म क्या है ?

सोमदत्त—प्राणीमात्रको पीड़ित करना।

रणधीर—संसार क्या है ?

सोमदत्त—द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय, अभाव।

रणधीर—सुखी कौन है ?

सोमदत्त—परोपकारी।

रणधीर—दु;खी कौन है ?

सोमदत्त—अज्ञानी।

रणधीर—सम कौन है ?

सोमदत्त—ज्ञानी।

रिपुदमन—(चौबेजीसे) महाराज ! क्या बजा होगा ?

चौबेजी—मेरे गरेमें घण्टा बंध रह्यो होई तो देखल्यो। (१)

---

(१) मेरे गलेमें घंटा बंध रहा होय तो देख लो।

रणधीर---नहीं चौवेजी, भीतर जाकर देख आओ।

चौवेजी---अव तो भांगके तारमैं उठवोई परो। (१)

(चौवेजी भीतर जाकर घण्टा देख आए।)

रिपुदमन---क्यों क्या देखा ?

चौवेजी---(भोजनकी याद आनेसे) दस सेरमैं पांच लडुआन्की कसर हैं भरोसो न होइ औरकों भेजके दिखाइल्यो। (२) (सव हंस पड़े।)

रणधीर---जाओ मोमवत्तीका इक्का और घड़ी यहां उठा लाओ।

चौवेजी---(मनमें) भांगके चढावमैं कहांकी आफत आई है। (प्रकट) 'अच्छा जिजमान लाऊं हूं। (भीतर जाकर एक हातमें इक्का और एक हातमें जेवघड़ी ले आए, पर नशेके कारण हातसे इक्का गिर पड़ा और खटका सुन, सब लोग उधर देखने लगे।)

रणधीर---हैं ! चौवेजी ये क्या किया, सम्हालकर क्यों नही लाए, इक्का कैसे गिर पड़ा ?

चौवेजी---मैं तो सम्हार कैंई लावै हो पर (हातसे घड़ी छोड़कर) ऐसे अचानक चक्क गिर पड़ो तो मैं कहा करूं ? (३) (सब हंसने लगे।)

रिपुदमन---आपके मिलापसे, जी तो कभी नहीं भरेगा परन्तु रात बहुत गई और दूर जाना है।

रणधीर---मेरे कारण आपको वड़ा श्रम हुआ। (रिपुदमन जानेको तयार हुआ)

---

(१) अव तो भङ्गके तारमें उठना ही पडा।

(२) दस सेरमें पांच लड्डुओंकी कसर है (अर्थात् दस वजनेमें पांच मिनटकी देर है) भरोसा न हो, तो औरको भेजकर दिखा लो।

(३) मैं तो सम्हालकर ही लाता था पर (हाथसे घड़ी छोड़कर) इस तरह अचानक गिर पड़ा तो मैं क्या करूं।

रणधीर—हां, कल सन्ध्या समय वसन्तकी शोभा देखनेके लिये केसर बागमें चलनेका विचार है । आप उस समय आवेंगे ?

रिपुदमन—कुशल रही तो निस्सन्देह । (जाते जाते मनमें) इस चञ्चल पुरुषकी बुद्धिका प्रवेश तो सब बातोंमें एकसा पाया गया परन्तु मेरे नए आनेपर आज यहां इतनी हंसी चोहल रही इसीसे इनका सुभाव हंसमुख मालूम होता है । (गया)

रणधीर—(मनमें) इनके मनका भेद लेने वास्ते मैंने ये उपाय किए थे परन्तु इनको सब बातोंमें एकसा पाया । (चौबेजीसे प्रकट) आपको नए आदमीके सामने जरा सोच समझकर बात करनी चाहिये, आज आपकी बातें सुनकर रिपुदमनसिंहने अपने जीमें क्या समझा होगा !

चौबेजी—अच्छी आगेसे याद रक्खूंगो । पर भूलहू जाऊं तो आप चेतायदेवो करो । (१)

रणधीर—(पण्डितजीसे) महाराज रात बहुत गई, सोनेका समय हो गया आप शयन करें ; मैं भी जाऊंगा । दण्डौत महाराज ! (सब गये)

इति चतुर्थ गर्भाङ्क ।

———*———

(१) अच्छा आगेसे याद रक्खूंगा, पर भूल भी जाऊं तो आप जता दिया करें ।

अथ पञ्चम गर्भाङ्क ।

स्थान राजमार्ग ।

सुखवासीलाल—(आकर)-रणधीरसिंह ख्वाव गाहमें तशरीफ ले गए, अब मैं अपनी माशूक़ दिल्रुवाके पास जाता हूं । (कुछ ठैरकर) आज तो हमारे खुदावन्द न्यामत शिकारगाहसे एक नया पन्छी लाये थे-देखें इसका क्या ढङ्ग रहे । चौवेजी तो सवा पा घी के सीधेमें निहाल हैं, लेकिन हमारे दिल्की ख्वाहिश कभी पूरी न हुई । हमारी विरादरीके लोग हजारोंका फायदा उठाते हैं, मगर हमारी वदकिस्मतीसे हमको ऐसा मालिक़ मिला है जिसके सौदे सुलफमें दस्तूरीतक हाथ नहीं लगती । इज्जत वड़ी, खातिर वड़ी, देने लेनेके नाम छदाम नहीं । हमारी महवूवाके वास्ते हर रोज जेवर चाहिये, अयालदरीका खर्च जुदा सिरपर घूमता है । रिश्तेदारोंकी ब्याह शादीमें न शरीक हों तो यों नाक कटी । दो दिन पीछे लड़कोंका मक्तव करना, भांजीको भात देना, कर्ज मिलता था उस वक्ततक हमको कुछ फिक्र न था, लेकिन अव क्या करें ? (विचारकर) हमनें अवतक अपनी मतलव वरारीके वास्ते सदहा तदवीरें कीं, मगर कोई तीरे-तदवीर निशाने पर न पहुंचा । असल तो ये है कि, जवतक इनके पीछे शराव और रण्डीकी लत न लगेगी, हमारी मतलव वरारी निहायत दुशवार है । मगर इनको इस राहपर लानेके वास्ते कौनसी तदवीर अमलमें लाऊं ? क्या हम खुद इस मामलेमें इससे कुछ जिक्र करें ; (विचारकर) हमको रूवरू तो

इस मामलेमें कुछ तहरीक न करनी चाहिये क्योंकि हमारे कहनेसे इनके दिलपर पूरा असर न हुआ, तो शायद: बड़ी खराबीकी सूरत पैदा होगी। दिलपर असर होनेका ये कायदा है कि आदमीका दिल बे होशीकी हालत सिवाय हर वक्त किसी वातके ख्यालमें मशगूल रहता है और उसका खास ये काम है कि वो अपने मुतल्लिकी तमाम वातोंके वास्ते कुछ न कुछ राय कायम करे। जब ये राय कायम हो जाती है तो आदमी उसीके बमूजिब अमल्दरामद करता है चूंकि कम्फहम आदमीकी राय मुस्तहकिम नहीं होती। इस सबबसे उसकी कारखाईमें अक्सर खलल वाके होते रहते हैं। मगर हमको यहां इस वातसे कुछ गरज़ नहीं है। जिस वक्त आदमीका दिल किसी वातके खयालमें महव हो, और वो उसकी निस्बत अपनी अक्लसे कुछ राय भी कायम कर चुका हो, उस वक्त उसका कोई मोतबिर आदमी उसके खयाल बमूजिब अपनी खास गर्ज विना उसकी रायसे मिलती हुई वात कहे तो उस वातका सुननेवालेके दिलमें पूरा असर होता है। मगर इन वातोंमें जिस कदर तफर्का पड़ता जायगा सुनने-वालेके दिलका असर बदलता चला जायगा। इस वास्ते हर शख्सको वात कहनेसे पहले इन तमाम वातोंपर गौर करना चाहिये चुनाचे मैं खुद गौर करता हूं तो मुझे रणधीर-सिंहकी तबियत शराब और रण्डीसे निहायत मुतनफ्फिर मालूम देती है। पस, मैं क्योंकर अपना दिली मन्शा उनके रूबरू जाहर करूं। (बहुत विचारकर) अच्छा कल वागमें इस पेचीदा मामलेको दुरुस्ती करने वास्ते मैं अपनी माशूके दिलरूवाको बुलाता हूं। मुझको यकीन है कि रणधीरसिंह उसको देखते ही एकबार हिरनकी तरह चौकन्ने होकर चौकड़ी भरेंगे। मुमकिन नहीं कि आखीरमें इसका जादू उनपर असर न करे। हर कामके आगाजमें चंद दरचंद नुक्सनुमाया होते हैं मगर कोशिश व तन्दिही करनेसे वह सब आसानी रफा हो सकती है :—

बहर कारे कि हिम्मत बस्तः गर्दद। अगर खारे बुवद गुल्दस्तः गर्दद॥

(सामनेसे जीवनको आते देख) ये कहां की आफत आइ। इस वक्त ये मुझसे यहां आनेका सवव दर्यापत करेगा तो मैं इसे क्या जवाव दूंगा। अच्छा देखो, इसे वातोंमें लगाता हूं। (१)

---

(१) रणधीरसिंह सोनेके मकानमें पधारे अब मैं अपनी प्यारी मनमोहिनीके पास जाता हूं। (कुछ ठैरकर) आज तो हमारे स्वामी शिकारके मैदानसे एक नया पन्छी (रिपुदमनसिंह) लाये थे देखें इसका क्या ढङ्ग रहे। चौबेजी तो सवा पा घृतके सीधेमें भरपाई कर देते हैं, परन्तु हमारे मनकी इच्छा कभी पूरी न हुई हमारी जातके लोग हजारोंका लाभ उठाते हैं पर हमारे मन्द भाग्यसे हमको ऐसा मालिक मिला है जिसकी चीज वस्तुमें छूट तक नहीं लगती; आदर वहुत, सत्कार वहुत, देने लेनेके नाम कौड़ी नहीं। हमारी प्यारीके वास्ते प्रति दिन आभूषण चाहिये, कुटुम्बका खर्च जुदा सिरपर फिर रहा है। सम्बन्धियोंके विवाहमें न जांय तो यों नाक कटी, दो दिन पीछे लड़कोंको पाठशालामें विठाना, भांजीको भात देना, उधार मिलता था जवतक हमको कुछ चिन्ता न थी परन्तु अव क्या करें (विचारकर) हमनें अवतक अपना मतलव निकालनेके लिये सैंकड़ों उपाय किये परन्तु कोई उपायका वाण निशाने पर न पहुंचा। सच तो ये है कि जवतक इनके पीछे मदिरा और वेश्याका रोग न लगेगा हमारा मतलव निकलना वहुत कठिन है, परन्तु इनको इस मार्गमें लानेके लिये क्या तजवीज करें क्या हम आप इस विषयमें इनसे कुछ चर्चा छेड़ें (विचारकर) हमको तो इस विषयमें कुछ न कहना चाहिये क्योंकि हमारे कहनेसे इनके मनपर पूरा असर न हुआ तो आगेको वड़े विगाड़की सूरत पैदा होगी। मनपर असर होनेकी यह रीति है कि मनुष्यका मन अचेत दशाके सिवाय हर पल किसी न किसी वातके विचारमें लगा रहता है और उसका मुख्य ये काम है कि अपनेसे सम्बन्ध रखनेवाली सव वातोंके लिये कुछ न कुछ राह निश्चय करता रहे। जव ये राह निश्चय हो जाती है, तो मनुष्य उसीके अनुसार वरताव करता है जैसे कि मूर्खोंकी राह मजवूत नहीं होती, इस कारण उनके कामोमें अकसर वखेडे रहते हैं, परन्तु यहां हमको इस वातके खूलासा करनेसे कुछ मतलव नहीं हैं, जिस समय मनुष्यका मन किसी वातके विचारमें लगा हो और वो उसके लिये अपनी वुद्धिसे किसी तरहकी राह निश्चय कर चुका हो उस समय उसका कोई विश्वासपात्र मनुष्य उसके विचारमें खास अपने मतलव विना उसकी राहसे मिलती हुई वात कहे

जीवन (पास आकर) ये कौन! लाला सुखवासीलालजी!

सुखवासीलाल—हां भाई, मैं तुमसे तख्लियेमें गुफ्तगू करनेका कई रोजसे मौका देख रहा था अच्छा हुआ तुम यहां मिल गए। कहो तुमारा मिजाज तो खुश है? (१)

जीवन—आपकी दयासे।

सुखवासीलाल—देखो जरा दूरंदेशीको काममें लाओ। नौकरीकी जड़ जमीनसे सवा हाथ ऊंची है, इसके ऊपर नाज करना दानिश्मन्दका काम नहीं। तुम नाहक महनत करके जान देते हो। मालिकके रोबरू कोशिश और तन्देही करके कारगुजारी दिखलाना, पीछेसे दोस्त आश्नाओंमें बैठ गुलछर्रे उड़ाना, बातों बातोंमें गैरकी कारगुजारी धूल

तो उस बातके सुनेवालेके मनमें पूरा असर होता है परन्तु इन बातोंमें जितना अन्तर पड़ता जायगा सुननेवालेके मनका असर बदलता चला जायगा। इस वास्ते सब मनुष्योंको बात कहनेसे पहले इन सब बातोंका विचार करना चाहिये सो मैं आप विचार करता हूं तो मुझको रणधीरसिंहके मनमें मदिरा और वेश्याकी अत्यन्त अरुचि मालूम होती है फिर मैं किस तरह अपने मनका भाव प्रकट करूं; (बहुत विचारकर) अच्छा,कल बागमें इस पेचदार बातकी मिसल बैठानेके वास्ते मैं अपनी प्यारी मनमोहिनीको बुलाता हूं। मुझको विश्वास है कि रणधीरसिंह उसको देखते ही एकबार चौकन्ने होकर हिरनकी तरह चौंकडी भरेंगे परन्तु सम्भव नहीं जो अन्तमें इसका मोहिनी मंत्र उनपर असर न करे। हर कामके अरम्भमें अनेकानेक विघ्न होते हैं परन्तु उपाय और परिश्रम करनेसे वह सहजमें दूर हो सकते हैं। जिस काममें साहससे कमर कसी जाय वह कांटा होगा तो भी गुलदस्ता हो जायगा। (सामनेसे जीवनको आते देख) ये कहांकी आपत्ति आई। ये इस समय मुझसे यहां आनेका कारण पूछेगा तो मैं क्या उत्तर दूंगा। अच्छा, देखो बातोंमें तो लगाता हूं।

(१) भाई मैं तुमसे एकान्तमें बात चीत करनेका कई दिनसे औसर देख रहा था अच्छा हुआ तुम यहां मिल गए। कहो तुम्हारा मन तो प्रसन्न है।

करके अपनी खैरख्वाही जताना! अरे मियां दौलत बड़ी चीज है इससे दुनियांके सार काम निकलते हैं देखो जवानीका कमाया जईफीमें काम आयगा? (१)

जीवन—क्या मैं रणधीरसिंहसे बेइमान हो जाऊं, एकको मालिक बनाकर दूसरेकी आस करूं, झूंटी महनत दिखाकर मालिकको धोखा दूं, मुझसे तो यह नहीं हो सकता। मैं तो सच्ची महनत भी नहीं जताया चाहता, जताऊं क्या? जिसके अन्नसे इस देहका पालन होता है उसके काममें इस देहको लगाना चाहिये, फिर दूसरेकी कारगुजारीको धूलमें मिलानेसे उसका जी कितना कल्पेगा, उसके कोसनेसे मेरा सत्यानाश हो जायगा आगेको मालिककी नौकरीमें मन न लगेगा और ये पाप मेरे सिर चढ़ेगा, ना भाई ना। ऐसा काम मुझसे तो नहीं हो सकता, धनकी क्या? जिसके हाथ गया, उसका हो गया, धनके लिये मैं अपना धर्म कैसे छोड़ दूं।

दांत न थे जब दूध दियो अब दांत दिये कहा अन्न न दै हैं,
जो जल में थल में पंछी पशुकी सुध लेत सु तेरी हु लै हैं।
काहेको सोच करै मन मूरख सोच करे कछु हाथ न पै हैं,
जानकूं देत अजानकूं देत जहानकों देत सो तोकुं हुं दै हैं॥ १॥

मुखवासीलाल—(मनमें) ये तो उल्टी चाल पड़ी। (प्रकट) मैंने तुम्हारा दिल देखनेके वास्ते ये बात कही थी, तुम्हारी राय दुरुस्त है।

---

(१) देखो कुछ दूरकी बातोंका विचार करो नौकरीकी जड़ धरतीसे सवा हाथ ऊंची है। इसके ऊपर भूले रहना बुद्धिमानका काम नहीं। तुम नाहक महनत करके जान देते हो। मालिकके आगे उपाय और महनत करके कारगुजारी दिखाना, पीछेसे यार दोस्तोंमें बैठकर आनन्द करना, बातों बातोंमें दूसरेकी कारगुजारी भूल करके अपनी खैरख्वाही (शुभचिन्तक पना) दिखाना। साहब! रुपया बड़ी चीज है इससे संसारके सब काम निकलते हैं देखो जवानीकी कमाई बुढापेमें काम आती है।

जीवन—अच्छा, आप इस अंधेरीमें इतनी रात कहां चले गए? आपका घर तो यहां नहीं है।

सुखवासीलाल—आज इस महल्लेमें एक जगह मशायरा होगा इस वास्ते दो घड़ी वहां जानेका इरादा है।

जीवन—साहब, मशायरेमें क्या होता है?

सुखवासीलाल—शायर कविलोग खड़े हो, अपने शेर औरोंको सुनाते हैं।

जीवन—तो मैं भी आपके साथ चलूंगा।

सुखवासीलाल—हमारे नज्दीक तो वहां तुम्हारी दिल्लगीकी कोई बात नहीं है।

जीवन—कुछ गांठका तो नहीं जाता?

सुखवासीलाल—(मनमें) अब इससे क्योंकर पीछा छुड़ाऊं। (प्रकट) लेकिन भाई मैं तो अभी कई यार दोस्तोंसे मिलता मिलता कोई रातके बारह एक बजे वहां पहुचूंगा।

जीवन—(मनमें) बनावटकी बातमें कभी झोल पड़े बिना नहीं रहता। (प्रकट) अच्छा आप यार दोस्तोंसे मिलने जायंगे, तबतक मैं उनके दरवाजे पर बैठा रहूंगा।

सुखवासीलाल—(मनमें) अब जिद करनेसे राज अफशा होता है मगर क्या करें? (१) (प्रकट) अब तो रात ज्यादा गई किसी रोज श्यामसे ले चलकर तुमको वहांकी सब सैर दिखायंगे।

जीवन—(मनमें) ये इनकी आलाटाली है पर अपनी बातका प्रमाण देनेके लिये मैं इनसे पहले कोई चीज ले लूं फिर इनके पीछे जाकर इनका सब हाल अपनी आंखसे देख आऊंगा। (प्रकट) बहुत अच्छा, आप सच कहते हैं, हम लोग मशायरेमें क्या समझें।

(१) (मनमें) अब हठ करनेसे गुप्त भेद प्रकट होता है परन्तु क्या करें।

हमको तो आपकी महर्बानी चाहिये । आप चाहें तो एक दिनमें हमारा दलिद्दर दूर कर सकते हैं ।

सुखवासीलाल—हम तेरी दानाईसे निहायत खुश हुए । ले, ये दश रुपये तुझे इनाम तरीक देते हैं, मगर खबरदार किसीसे कुछ जिक न हो । (मनमें) (१) ये दश रुपये आज नाथूरामसे आये थे सो यों चले गये ।

जीवन—(रुपये लेकर) भगवान् आपका भला करे, हमारा तो आप पालन करते हो ।

[आगे आगे सुखवासीलाल पीछे पीछे जीवन गया]

इति पञ्चम गर्भाङ्क ।

प्रथम अङ्क समाप्त ।

———*———

(१) हम तेरी बुद्धिमानीसे बहुत प्रसन्न हुए, ले ये दश रुपये तुझको पारितोषककी भांत देते हैं परन्तु सावचेत, किसीसे कुछ चर्चा न हो ।

अपनी बड़ाई करते हो ? कल रङ्गभूमिमें हार होनेसे तुमको कुछ लाज नहीं आई और रातकी हंसी होनेपर भी तुम्हारा मन ढीला न हुआ । सच है, चिकने घड़ेपर पानी नहीं ठैरता । तुम्हारे मनमें चुभती हुई बातें न लगेंगी पर चुभते हुए बाण लगेंगे । मनुष्यकी मौत आती है, जब उसके शरीरमें वायु भड़क उठती है । इस कारण मैं तुम्हार वचनोंका कुछ बुरा नहीं मानता परन्तु तुम्हारी बुद्धि ठिकाने लानेका उपाय करता हूं । जबतक मेरे शरीरमें स्वांस बाकी रहेगा मैं अपने वैरियोंको घोड़ेकी पीठपर जमकर कभी न बैठने दूंगा । (अपनी सेनाकी तरफ देखकर) मेरे बहादुर लड़वैय्ये वीरो ! हुशियार हो ! अपनी तरवार म्यानसे बाहर निकाल लो ! और परमेश्वरका नाम लेकर आज ऐसी बहादुरी करो जिससे अपना नाश हो जाय तो भी अपना नाम भूमण्डलपर सदा अमर रहे ।

धरहु धरहु चहुं ओते,र करहु करहु बल वीर ।
लरहु लरहु यश कारणैं, हरहु हरहु रिपु धीर ॥

(सब सेनाने म्यानसे तरवारें निकालकर ऊंची उठा लीं और रिपुदमनकी कहनसे अपनी प्रसन्नता जताकर तरवार चमकाते हुए रिपुदमनके सङ्ग नेपथ्यमें चले गए ।)

इति प्रथम गर्भाङ्क ।

---*---

अथ द्वितीय गर्भाङ्क ।

स्थान रणधीरका महल ।

(रणधीर पलङ्गपर सोता है ।)

जीवन—(रणधीरको जगाकर) उठो महाराज ! उठो, ये समय आपसे क्षत्री वीरोंके सोनेका नहीं है । आप क्या नींदसे प्रीति करके मित्रकी प्रीति भूलते हो ? आपकी इच्छा पूरी होनेका समय आया । आपके लिए रिपुदमनसिंहने अपने प्राणका दाव लगाया है, वैरियोंके सेना सागरमें इस समय आपका महल जहाजसा दिखाई देता है । आप अपने यशकी रक्षा करनेके लिए जल्दी उठो !

रणधीर—(चौंककर उठ बैठा और जीवनकी तरफ देखकर अचरजसे) क्या कहा ? तैने अभी रिपुदमनका नाम लेकर क्या कहा ? रिपुदमनसे किसकी लड़ाई हो रही है ? किसने सिंहकी डाढ़से मांस निकालनेका विचार किया ? कौन मेरे मनकी दवीदवाई आगको भड़कानेका उपाय करता है ? मेरा केसरिया वागा ला !

जीवन—रिपुदमनकी वीरता देखकर मैं तो चकित हो गया ! आपके लिए वो वीर अपने मरनेका डर छोड़कर लड़ता है । उसके हाथसे कितनेक राजा और सेनापति मारे गए । उसके वेगसे वैरीकी सेना काईसी फटती चली जाती है । पहाड़से हाथियोंपर उसकी तरवार बिजलीसी गिरती———

रणधीर—वस जीवन वस, तू अपनी वातको इसी जगह पूरी कर । मुझको इस समय इन वातोंके सुननेका अवकाश नहीं है ।

जीवन—तो क्या रिपुदमनके लिए अपने प्राण दोगे ?

रणधीर—प्राण तो पहले ही दे चुके अब इसमें नई वात क्या कहते हैं ।

जीवन—भला इससे आपके बन्धू जनोंका क्या होगा ?

रणधीर—कुछ हो, सब लोग मतलबकी प्रीति करते हैं। जिसका जिसमें जितना मतलब निकलता है उसकी उससे उतनी प्रीति होती है और वो मतलब बहुधा द्रव्य सम्बन्धी पाया जाता है। जैसे मीठेके लिए चेंटियें दौड़ती हैं तैसे रुपयेके लिए मनुष्य फिरते हैं। रुपया संसारी मनुष्योंके नाच नचानेकी एक कल है फिर ऐसी मतलबकी प्रीतिके वास्ते मैं मित्रकी प्रीति कैसे भूल जाऊं। मेरे शस्त्र जल्दी ला। मित्रके दुःख दूर किए बिना मुझको एक एक पल बरस बरसकी बराबर बीतता है।

जीवन—आप सरीखे कुलवानोंको तो ऐसा ही करना चाहिये, परन्तु मैं मारा गया। हाय ! मेरा क्या हाल होगा ?

रणधीर—जीवन ! ओ जीवन ! तू क्या कहता है, आज तुझको क्या हो गया ? मैं मरते मर जाऊंगा पर तेरा उपकार कभी नहीं भूलूंगा।

> **सेवत सकल जन नाथकों धन हेतु प्रीति बढ़ायकै।**
> **मालक निधन तो धन भए धन मिलन हित चित चायकै॥**
> **पै विकल सम्पत छीन आस विहीन निज पति पायकै।**
> **पूजत न तो सम धन्य कौ जन अवनि तलमैं आयकै॥१॥**

तेरे उपकारका बदला तो मैं इस समय कुछ नहीं दे सकता। परन्तु मेरी प्रसन्नताके लिए तू मेरा मालमता ले।

जीवन—(आंसू भरकर) मेरे स्वामी ! मेरे छत्र ! मेरे मुकुटमणि ! आप ऐसा वचन मत कहो। आपके मुखसे ये वचन अच्छा नहीं लगता। मैं क्या धन दौलतका भूखा हूं ? मैं तो केवल आपके मनका भूखा हूं। मेरी तो जन्म भरकी कमाई आप हो, आप ही मेरे नयनोंका प्रकाश हो, आप ही मेरे पूज्य हो, आप ही

मेरे प्राण हो, आप ही मेरे सर्वस्व हो। मैं दुःखिया आपके वियोगमें किसके सहारे अपने प्राण रक्खूंगा!

रणधीर—जीवन! तू मुझे कृतघ्न मत समझ, मैं कृतज्ञ हूं। मेरे हृदयमें क्रोधकी आग दहकती है, मेरे मनमें मित्रकी प्रीति महकती है, मैं वैरियोंको तिनके वरावर जानता हूं। मैं जगतके अपयशको मौतसे वढ़कर मानता हूं। ये लड़ाईका वाजा मेरे मनकी उमङ्गको चौगुना वढ़ाता है। लड़ाईसे विमुख होना हमारे कुलको कलङ्क लगाता है, तोभी तेरे लिए, तेरी प्रसन्नताके लिए, तू कहे तो मैं इन सव वातोंको पानी दूं! मैं अपने प्राणोंसे वढ़कर जस और जससे वढ़कर धर्मको समझता हूं तौ भी तेरे लिए मेरा धर्म जाय तो जावे, तेरी मर्जी विना कभी कोई काम न करूंगा। जिस दिन मेरी छाया भी मेरा साथ छोड़कर अलग हो गई थी उस दिन तैंने अपनी जान झोंककर मेरा साथ दिया, तो क्या अव मैं तुझको उदास करके तेरी मर्जी विना कोई काम करूं? जो मेरे रोकनेमें तेरी प्रसन्नता होय, जो इस दशामें मेरे जीनेका तुझको भरोसा होय, तो तू मन खोलकर कह दे, मैं तेरा वचन कभी नहीं टालूंगा।

जीवन—(आंसू पोंछकर) ना! मैं आपको रिपुदमनकी सहायता करनेसे नहीं रोकता। मेरी चाहे जैसी दुर्दशा हो, मैं वनमें कन्दमूल खाकर अपनी घटतीके दिन पूरे करूंगा, परन्तु मुझसे नीच आदमीके लिए आपके निर्मल जसमें धव्वा लगे सो अच्छा नहीं। मैं अभी जाकर आपके शस्त्र लाता हूं। (गया)

रणधीर—किस उपायसे जीवनके उपकारका वदला दूं? मैंने उसको सव तरह ललचाया पर वो कुछ नहीं चाहता। जवसे मेरी जन्मभूमि अथवा यों कहो कि माताकी गोद छुड़ाई गई तवसे ये जीवन मेरा जीवन है। मेरे पीछे न जाने इसका क्या हाल होगा। ओहो! मेरी इतनी आयु पवनकी भांत निकल गई! मुझको सवसे

अधिक दुःख अपने समय व्यर्थ जानेका है। पानीकी पोलके समान समयमें अवकाश भर रहा है परन्तु सब लोग आलस्य कर अपना समय व्यर्थ खोते हैं। कामकी बहुतायत नांम मात्र समझनी चाहिये; क्योंकि सब लोगोंको उनके मामूली काम सिवाय कोई आवश्यक काम आ जाता है तव वो उसके लिए उतने ही कालमें अवकाश निकाल लेते हैं जो ऐसा अवकाश हर वार उपयोगमें आता रहे तो कितना लाभ हो! अच्छा, अव भी जीवन आवे जितने मैं पिताकी चरण संनिधिमें एक पत्र लिखता हूं।

(लिखने लगा)

(नेपथ्यमें) हे हे रथी, महारथी, सेनापति, सेनाके मुखिया लोग! वचाओ। रिपुदमनसिंहका रुण्ड, क्रोधित कालकी तरह सव सेनाका नाश किए डालता है। इसकी वाण वर्षासे आपलोग छत्र वनकर हमको वचाओ!

रणधीर—(चौंक कर) मेरे जीवनपर धिक्कार है! मेरी वीरतापर धिक्कार है! रिपुदमनसिंह तो मेरे पीछे भी मेरे लिए लड़ता है और मैं जीते जी ही उसकी सहायतासे जी छिपा कर यहां वैठ रहा जो मेरे पाषाण हृदयमें कुछ भी प्रीति-का अंश होता तो ये दारुण वचन सुने पीछे वो कैसे स्थिर रहता! अव शस्त्रोंके लिए ठैरना वृथा है। अव तो रिपुदमनसिंहका धनुष उठाकर मैं भी उसीके पीछे जाऊंगा।

(जीवनका प्रवेश)

रणधीर—(उसकी तरफ देखकर) अव शस्त्रोंसे क्या है? रिपुदमनसिंह वीर लोकको गए। मैं भी उसका धनुष उठाकर उसीके पीछे जाता हूं। भाई जीवन! तू अपने चित्तको किसी तरह उदास मत करना। और ये विनयपत्र पिताके चरण कमलोंमें पहुंचा देना। मुझको देर होगी तो रिपुदमनसिंह आगे निकल जायगा!

(चल दिया।)

जीवन—(नैनोंमें जल भर कर रणधीरके पीछे जाते, जाते) महाराज ! आपने अपने प्यारे मित्र रिपुदमनसिंहका साथ दिया, मुझ निराधार सेवकका नहीं !

(गया)

इति द्वितीय गर्भाङ्क ।
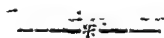
अथ तृतीय गर्भाङ्क ।

स्थान सूरतका राजमहल ।

(प्रेममोहिनी और चम्पा बैठी हैं)

चम्पा--(प्रेममोहिनीसे हंसकर) देखो भौंरेकी चञ्चलतासे कमलके हृदयकी सब केसर झड़ गई ।

(प्रेममोहिनीने लजाकर नेत्र नीचे कर लिए)

चम्पा--(मुस्कुराकर) क्यों सखी, मुझसे क्यों बुरा मानती हो ? मैं न भौंरा हूं, न भौंरेका आदर करनेवाली मालती हूं !

मालती--(जल्दीसे आकर) मेरा नाम लेकर क्या कहा ?

चम्पा--कुछ नहीं राजकुमारीसे एक बात थी ।

मालती--(प्रेममोहिनीकी तरफ देख कर) राजकुमारी, आजका तुमने कुछ नया हाल भी सुना । कहते हैं कि आमकी उस लहलही लताका मौर गिरानेके लिए चारो तरफसे दल बादल उमड़े चले जाते हैं जिसपर बैठकर कोयल अपने मीठे सुरोंसे सबका मन प्रसन्न करती थी ।

प्रेममोहिनी--(घबराकर) क्यों ?

मालती--इन्द्र कोपके सिवाय इसका और क्या कारण होगा ?

प्रेममोहिनी--क्यों सखी इसकी सोंधी सुगन्ध तो सबको प्यारी लगती है फिर इन्द्रने इसपर क्यों कोप किया ?

मालती—

दोहा ।

"कहूं कहूं गुणके परस उपजत पीर शरीर ।
जैसै मीठी बोलके परत पींजरा कीर ॥ १ ॥"

प्रेममोहिनी—होनी बल्वान है । (उदास हो, धरतीकी तरफ देख) सखी ! मनके सुख विना तनके सब सुख वृथा हैं ।

सूरतके महाराज—(जल्दीसे आकर) मोहिनी किस विचारमें बैठी हो ? तुम्हारा मुख क्यों उदास हो गया ? हैं, तुम्हारी आंखोंमें आंसूका क्या काम ? रण-धीरका बखेड़ा पड़नेसे तो तुम उदास नहीं हो ?

प्रेममोहिनी—(खड़ी होकर दाहने हाथसे अपने सिरके पल्लेको नीचा सरकाती हुई धरतीकी तरफ देखकर) पिताजी ! आप मेरे लिये कुछ चिन्ता न करें, मुझको राजा रङ्क सब बराबर हैं । इस कठिन समयमें सब राजा राजी खुशी अपने घर जायं, ऐसा उपाय करो जिसमें आपकी बात रहे । आप बड़े हो और बड़ोंको बहुत क्षमा करनी चाहिये । देखो, पहाड़ जितना ऊंचा होता है उतनी ही वर्षा उसको अधिक सहनी पड़ती है ।

सूरतके महाराज—जिसने मेरी आज्ञा न मानी, जिसने मेरी राजसभामें बखेड़ा फैलाया, जिसके कारण मुझको सबसे आगे नीचा देखना पड़ा, क्या मैं उसको दण्ड न दूं ? क्या मैं सोनेके सुहावने दानेको काले मुंहकी चिर्मिठीके साथ तोल दूं ?

प्रेममोहिनी—मेरी राहमें तो बाप दादोंके नामसे बड़ाई पानेवालोंके बदले अपनी मिहनत और बुद्धिसे इज्जत पैदा करनेवाले हजार दर्जे अच्छे हैं ! जो लोग बाप दादोंके नामसे बड़ाई पाते हैं उनके बड़े भी कभी न कभी गरीबोंसे बड़े आदमी हुए होंगे । परन्तु मैं इस विषयमें आपसे कुछ नहीं कहती । मेरी तो यही कहन:

है कि मेरे लिए आपका वचन झूठा न हो, आपको किसी तरहका दुःख न उठाना पड़े, मेरे भागमें अपना वेरी लिखा है पर मैं उसीको प्राणनाथ समझूंगी। मेरे लिए आप अपनी प्रजाका नाश मत करो, सिंहसे वन और वनसे सिंहकी रक्षा होती है। देखो, महाराज रामचन्द्रने प्रजाके प्यारसे निर्दोष जानकीजीका परित्याग कर दिया।

सूरतपति—वेटी! तैंने क्या कहा? फिर समझाकर कह। क्या तू रङ्गमें भङ्ग पड़नेसे उदास होकर ऐसे वचन कहती है?

प्रेममोहिनी—हां महाराज! इन वीरोंकी चढ़ाई मेरे जीवपर है। सूरतमें परदेसियोंकी सिरोही (तरवार) अच्छी नहीं लगती। आप इस लड़ाईको जल्दी रोकिए। इकले मनुष्यकी कुछ गिनती है जिसपर वड़े वड़े राजा अपनी सेना साजकर चढ़ाई करें! सव लोग कहेंगे कि एक निरपराधी सूरवीर सूरतके महाराजसे नहीं जीता गया तव सूरतके महाराजने अपनी वेटी और राजका लालच देकर परदेसियोंसे वो कांटा निकलवाया, ये वात आपके नामको धव्वा लगानेवाली है। आप जल्दी जाकर इस वखेड़ेको दूर करो नहीं तो सदाके लिए ये कलङ्कका टीका आपके सिरपर लगा रहेगा।

सूरतके महाराज—(मनमें) इस समय मेरा क्या हाल है? मैं सोता हूं कि जागता हूं! किसीने मुझसे ये वातें कही सुनी या योंही मैंने अपने मनसे वना लीं। निस्सन्देह ये वातें मेरे गले उतरती हैं, परन्तु मैं अपना वचन कैसे फेरूं?

प्रेममोहिनी—मैं आपका सारा विचार अच्छी तरह सव समझती हूं। अपनी पुरानी रीति पलटनेमें सब झिझकते हैं। वो रीति बुरी होय तो भी उसके छोड़नेमें आनाकानी करते हैं, परन्तु आपको ये मुनासिव नहीं। जव क्रोधका कारण नहीं रहा तो क्रोध क्यों वाकी रहे? आप क्या बुरी वातको जान बूझकर छोड़नेमें लजाते हो? माथेतक पानी पहुंचने पीछे तैरनेका कुछ उपाय नहीं रहता। मैं आपसे स्पष्ट

कहती हूं कि आप अपनी जिद् छोड़ दो ; न छोड़ोगे तो पीछेसे आपको बहुत पछताना पड़ेगा।

सूरतके महाराज—बेटी, तेरा वचन मेरे मन पर असर करता है, परन्तु, मेरा वचन आज तक खाली नहीं गया।

प्रेममोहिनी—महाराज! आपने उस दिन भाई (रिपुदमन) से ये वचन कहा था कि, "बेटा! राज पाकर कभी अभिमान न करना। राजा कुछ ईश्वर नहीं, देवता नहीं वो सब प्रजाकी तरफसे एक अधिकारी मात्र है। उसको प्रजाकी रक्षा और भलाईके लिये प्रजासे धरतीकी उपजका छठा हिस्सा मिलता है। उसको देशकी रक्षा और प्रजाकी भलाईके लिये सब तरहका अधिकार है, परन्तु उसको प्रजापर किसी तरहकी अनीति करना अथवा प्रजाके रुपयेको अपने ऐश आराम के कामोंमें खर्च करना उचित नहीं। जो राजा अपने स्वार्थ अथवा पक्षपातसे प्रजाको दुःख देता है उसका कभी भला नहीं होता।" ये वचन आपने अपने मुखसे कहे थे। फिर इस समय अबका वचन निभावेंगे तो ये वचन कैसे निभेंगे? घबराहट, जलदी अथवा क्रोधसे बिना विचारे कोई बात मुखसे निकल जाय तो उसके तत्काल सुधारनेमें इतना दोष नहीं गिना जाता जितना जान बूझकर धर्म छोड़ अधर्म करनेमें होता है।

सूरतपति—अच्छा बेटी, अच्छा, मैं तेरा वचन मानकर यहांसे जाता हूं परन्तु इस समय मेरी सुध बुध ठिकाने नहीं है।

(गया)

प्रेममोहिनी—सखी! जबतक कोई बात निश्चय नहीं होती उस समय तक मुझको तो दुःख है क्योंकि जब कोई बात निश्चय हो जायगी तब तो मैं इस लोक या परलोकमें स्वामीके चरण समीप जाकर तत्काल सुखी हो जाऊंगी।

इति तृतीय गर्भाङ्क।

—*—

अथ चतुर्थ गर्भाङ्क।
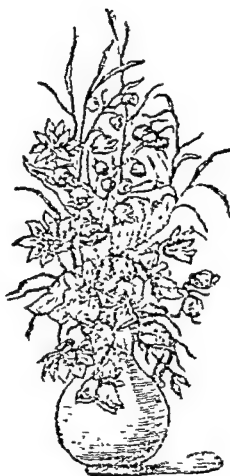
स्थान रणधीरका महल।

(सुखवासीलाल और नाथूराम सूती गलीचेपर बैठे हैं)

नाथूराम--क्यूंजी या लड़ाई किणतरै हुई ? काल तो इणरी बात भी नहीं छी ! (१)

सुखवासीलाल--सेठजी ! क्या पूछते हो ? एक मछली सारे दर्याको गन्दा कर डालती है, एक गुनहगारके बैठनेसे किश्ती दर्या बुर्द हो जाती है, आतिशकी एक चिङ्गारी रुईके अंबारे कसीरको खाक कर डालती है, अलाहाजुल-कयास एक चुगलखोर वड़ीसे वड़ी रियासत तवाह करनेके वास्ते काफी है। (२)

नाथूराम--कांई फुरमाई ? मैं तो क्यूंवी कोनैं समझ्यों। (३)

सुखवासीलाल--समझने समझानेका वक्त नहीं रहा; खामोशी बहर हाल बेहतर है।

नाथूराम--क्यूं तो फुरमाणी चाहिये ? (४)

---

(१) क्योंजी ये लड़ाई किस तरह हुई ! कल तो इसकी चर्चा भी न थी।

(२) सेठजी ! क्या पूछते हो ? एक मच्छी सारे जलको बिगाड़ती है, एक पापीके बैठनेसे नाव डूब जाती है, आगकी चिंगारी रुईके वड़े ढेरको राख कर डालती है, इसी तरह एक चुगल-खोर वड़ीसे वड़ी रियासतको बिगाड़नेके लिये बहुत है।

(३) क्या कहा ? मै तो कुछ भी न समझा।

(४) कुछ तो कहना चाहिये ?

सुखवासीलाल--जिस रियासतमें नक्काल मुसाहिब हों, खिदमतगार मशीर हों, उस रियासतमें वजुज वर्बादी और क्या अखीर होगा ? (१)

नाथूराम--आदमी परखवा में तो रणधीरसिंहजी री भारी सोभासुणी छै। (२)

सुखवासीलाल--खाक, जो इनको आदमीकी ही शनाख्त होती तो नुक्स क्या था ? हर शख्सका दिल किसी न किसी कारकी तरफ रुजू होता है। अगर उसकी तवियतके मुआफिक उससे काम लिया जाय तो निहायत उमदा काररवाई जहूरमें आवे। इन्तजामें मुल्कीका ये एक जुज है, मगर हर किसीको आदमीकी शनाख्त नहीं होती! रणधीरसिंह आदमीकी कदर क्या जाने ? कोहिस्तानकी सरसब्जी दूरसे यक्सां नजर आती है लेकिन कोई उसके करीब जाकर देखे तो उसका नशेवो फराज मालूम हो। आपकी क्या ? घड़ी दो घड़ीके वास्ते आए अपना काम करके चले गये। देखो, इनके दिमागमें जवानीकी बू समा रही है। इनका मिजाज निहायत शक्की है, ये सबको वेवफा समझते हैं ; इनकी कल तो चुगलखोरोंके हात है। (३)

---

(१) जिस रियासतमें भांड़ मुसाहब हों, खिदमदगार सलाह देनेवाले हों उस रियासतमें सिवाय सत्यानाशके क्या परिणाम होगा ?

(२) आदमी परखनेमें तो रणधीरसिंहकी बड़ी बड़ाई सुनी है।

(३) धूल, जो इनको मनुष्यकी ही पहचान होती तो कसर क्या थी ? हर मनुष्यके मनका लगाव किसी न किसी कामकी तरफ होता है जो उसके मनमूजब काम उससे लिया जाय तो काम बहुत अच्छा चले, देशके प्रबन्धका ये भाग है, परन्तु सबको मनुष्यकी पहचान नहीं होती। रणधीरसिंह मनुष्यकी परख क्या जाने ? पर्वतकी हरियाली दूरसे एकसी दिखाई देती है पर कोई उसके पास जाकर देखे तो उसका ऊंच नीच मालूम हो। आपकी क्या ? घड़ी दो घड़ीके वास्ते आए अपना काम करके चले गए। देखो, इनके सिरमें जवानीकी वास बस रही है। इनका सुभाव बड़ा वहमी है, ये सबको निर्मोही समझते हैं, इनकी कल तो चुगलखोरोंके हाथ है।

नाथूरान--आपने इशी कांई बात देखी ? (१)

सुखवासीलाल--देखी क्या आजमाई। परसों शबको फितनेपर्दाजके फरेबमें आकर हजरतने मुझसे चक्कर लाए थे! मगर मैं भला कब दावमें आनेवाला हू, मैंने ऐसा जवाब दिया कि हजरत अपनासा मुंह लेकर खामोश रह गए। (२)

नाथूराम--आपरी बात तो आपरे साथ रही, पण मैं रणधीरसिंह जीरी इसी नहीं जाणी छी। (३)

सुखवासीलाल--अपने अपने दिलमें सब दानिशमन्द होते हैं मगर गैर तारीफ करें जब अक्लमन्दी समझी जाय। देखो दुश्मनकी लाइन्तहा फौजके मुकाबिल एक इन्सान जईफुल बुनियांनका ताकत आजमाई करना किस जी शउरको पसन्द आयगा! (४)

चौबेजीका प्रवेश।

चौबेजी--आज सबेरे काऊ भले भागवानको मोंड़ो देखके उठेहे जो भोरही लछमीते भेट भई। (जेबसे नौरत्नकी जोड़ी निकालकर) भय्याजी (रणधीर

(१) आपने ऐसी क्या बात देखी ?

(२) देखी क्या अजमाई। परसों रातको किसी बखेड़िएके दावमें आकर महात्माने मुझसे चक्कर लाए थे! परन्तु मैं भला कब दावमें आनेवाला हूं। मैंने ऐसा जवाब दिया कि वो आप अपना सा मुंह लेकर चुप रह गए।

(३) आपकी बात तो आपके साथ रही परन्तु मैंने रणधीरसिंहकी ऐसी नहीं जानी थी।

(४) अपने अपने मनमें सब चतुर होते हैं परन्तु दूसरे बडाई करें जब चतुराई समझी जाय। देखो, बैरीकी अगणित सेनाके आगे एक तुच्छ मनुष्यका बल करना किस बुद्धिमानको अच्छा लगेगा!

सिंह) की सदा जय बनी रहै। हमारे लिये तो ए दूसरो राजा करन है। आहा! जाको देख के हमारे घरके केसे राजी होयंगे! (१)

मुखवासीलाल---क्या ये नौरतन हमारे आकाय नामदारने आपको इनायत किया? (२)

चौवेजी—हां भय्या! आज मैं बगीचीसे कागावासी (भङ्ग) छानके आवै हो तब वे मोको पौरीमें मिले। भुजबन्धकी जोरी दीनी और कहवे लगे कि "कही सुनी छिमा करियो।" (३)

सुखवासीलाल---(मनमें) इन वातोंसे खुद उनके दिलकी मायूसी जाहिर होती है। वस, अब माल खुर्द बुर्द करनेकी कोई तद्बीर करनी चाहिये। (४)

नाथूराम—(मनमें) रणधीरसिंहजी उठासें पाछा नहीं वाह्वड्या तो सगरी धरोड़ म्हानें पचसी जो या धरोड़ म्हानें पचजाय तो बालाजीरे सोनारो छत्तर चढ़ाऊं। (५)

(जीवनका प्रवेश)

---

(१) आज सवेरे किसी अच्छे भाग्यवानका मुख देखकर उठे थे जो सवेरे ही लक्ष्मीसे मिलाप हुआ। (जेबसे नौरत्नकी जोड़ी निकालकर) भाई इस (रणधीरसिंह) की सदा जय बनी रहे। हमारे लिए तो ये दूसरा राजा कर्ण है। आहा, इस नौरत्नको देखकर हमारे घरके कैसे राजी होंगे!

(२) क्या ये नौरत्न हमारे मालिकने आपको दिया?

(३) हां भाई! आज सवेरे मैं बगीचेसे प्रातःकालकी (भङ्ग) छानकर आता था तब वे मुझको पौलीमें मिले। ये भुजबन्धकी जोड़ी दी और कहने लगे कि "कहा सुना क्षमा करना।"

(४) (मनमें) इन वातोंसे खास उनके मनकी उदासी जानी जाती है। वस, अब माल चंपत करनेका कोई उपाय करना चाहिये।

(५) (मनमें) रणधीरसिंह वहांसे न फिरे तो सब धरोहड़ हमको पचेगी। जो ये धरोहड़ हमको पच जाय तो वालाजीको सोनेका छत्र चढ़ाऊं।

जीवन--हे निर्दई विधाता ! तेरी यही इच्छा थी । जैसे सूर्य दिन भर अपना प्रकाश करके सांझको अस्त हो जाता है तैसे आज--(नेत्रोंमें जल भर, मुंह पुल्का चुप हो गया ।)

चौवेजी--भय्या ! तू इतनो उदास क्यों होत है ? जब तांई हमारे माथे पै हमारी छत्र रहैगी तब तांई हमको काहूको डर नांहिंनैं । (१)

जीवन--भाई ! मुझको उसीका सन्देह है ।

सुखवासीलाल---(मनमें) अब माल तीर करनेका वक्त आया । (प्रगट) क्या दर हक़ीकत इस वाके जां काहका वकूअ हुआ ? इस ख़बर वहशत असरके सुननेसे दिल पारह, पारह हुआ जाता है ! मगर ये वक्त दिल मजबूत रखनेका है । ऐसा न हो कि हम दर्याय ग़ममें गोप्तेज़न रहैं जब तक दुश्मन जानकी तरह माल पर हाथ साफ करे । इस वक्त मालकी हिफ़ाज़त मुकद्दम है और जब तक वो माल इस मकानसे अलहदा न किया जाय उसके महफ़ूज़ रहनेकी कोई सूरत नज़र नहीं आती । (२)

जीवन--अब इस मालकी रखवाली करके क्या करेंगे ? जब इसका भोगनेवाला कोई न रहा तो इसका होना न होना बराबर है । भला, जिन शस्त्रोंको

(१) भाई तू इतना उदास क्यों होता है, जबतक हमारे सिरपर हमारा छत्र रहेगा तबतक हमको किसीका डर नहीं ।

(२) (मनमें) अब माल उड़ानेका समय आया । (प्रकट) क्या निश्चय ये प्राणहारी प्रसंग हुआ ? इस बावले बनानेवाली खबरके सुननेसे मनके टुकडे टुकडे, हुए जाते हैं । पर ये समय मन दृढ़ रखनेका है । ऐसा न हो कि हम शोक सागरमें डूबे रहें जबतक वैरी जानकी तरह मालपर हाथ बढ़ावे । इस समय मालकी रक्षा करना मुख्य काम है, और जबतक वो माल इस मकानसे अलग न किया जाय उसके बचनेकी कोई सूरत नजर नहीं आती ।

रणधीरसिंह बांधते थे अब उन शस्त्रोंका बांधनेवाला कोई दिखाई देता है ? इसी तरह जिन लोगोंने रणधीरसिंहकी सेवा की, उनसे कभी दूसरेकी नौकरी हो सकती है ! हमलोग वनमें रहकर अपनी उमर पूरी कर देंगे पर रणधीरसिंहके सेवक होकर दूसरेकी झूटन कभी न खायंगे ।

मुखवासीलाल——(मनमें) अगर इसने अपने कौलकी ताईद की तो बेशक ये कुल माल मेरे कब्जे तसर्रुफमें आयगा । अच्छा, अब मैं इसको जिदपर चढ़ानेकी तद्‌वीर करूं क्योंकि गुल जाए होनेसे समर और समर जाए होनेसे तुखम हासिल होता है । (प्रकट) बस, आप ज्यादे चर्ब जवानी न करें, मैं आपके कौल फेलसे बखूबी वाकिफ हूं । आप अपनी वफादारी वो जांनिसारी जाहिर करनेके वास्ते ये चाल डालते हैं, मगर महज फजूल । बगैर आग राखसे मोम कभी नहीं पिगलता । (१)

जीवन——भाई ! मैं कारगुजारी नहीं दिखाता । उनकी कृपाके आगे मेरी सेवा किस गिनतीमें है । मैं सौ जन्मतक मुफ्तमें उनकी सेवा करूं तो भी बराबर नहीं हो सकता । तुम्हारी बातोंका मतलब मैं अच्छी तरह समझता हूं । देखो, रणधीरसिंह अपने सब नौकरोंपर एकसी दया रखते थे पर तुम उनकी दयाको अपनी कारगुजारीका फल समझते हो । इस कारण तुम्हारे मनमें उपकारका उभार नहीं

---

(१) (मनमें) जो इसने अपने वचनको निभाया तो ये सब माल मेरे अधिकार और बर्तावमें आवेगा । अच्छा, अब मैं इसको जिदपर चढ़ानेका उपाय करूं, क्योंकि फूलके नष्ट होनेसे फल और फूलके विनाशसे बीज प्राप्त होता है । (प्रकट) बस, आप ज्यादा बातें न बनावें, मैं आपकी जबान और कर्तबारीसे अच्छी तरह वाकिफ हूं । आप (उनके) अपनी प्रीत और जिवारी जतानेके लिए ये चाल डालते हैं, परन्तु वृथा । ... राखसे मोम कभी नहीं पिगलता ।

होता और मैं अपनी जीविकाको केवल उनकी कृपाका फल समझता हूं। इस कारण लाजसे मेरी आंख नीची हुई जाती है। वस, इतना ही तुम्हारे मेरे सुभावमें अन्तर है।

सुखवासीलाल—अच्छा, मैं वेवफा, अह्सान फरामोश सही तुम तो बड़े वफादार हो। देखें इस वफादारी और खैरख्वाहीके जज्बेमें आकर आज क्या वहादुरी करोगे? (१)

जीवन—अव मैं क्या वहादुरी करूंगा! डोर कटते ही पतङ्ग तो कट चुका, उसके ढांचको कहीं लिए फिरो, जवतक घटतीके दिन पूरे न होंगे इसका यही हाल रहेगा।

सुखवासीलाल—तुम तो अभी दुनियांको तर्क करते थे? "तर्के दुनियां शहवतस्तो हविस्। पारसाई न तर्के जामेओवस" (२)

जीवन—मैं अभी संसारको छोड़ता हूं। रणधीरसिंह विना मुझको ये मकान डरावना लगता है। परन्तु तुम कभी खोटा लालच न करना। अच्छे लोग महनत और धर्मकी कमाईपर दृष्टि रखते हैं, और जिनको मुफ्तके माल खानेकी चाट पड़ जाती है वे किसी कामके नहीं रहते, उनको सव निर्लज्ज वताते हैं, उनसे देशका वड़ा अहित होता है। मैंने महाभारतमें महात्मा विदुरका ये वचन सुना था कि "पापी (मनुष्य) पहले फलते फूलते हैं परन्तु पीछे जड़मूलसे नाश

---

(१) अच्छा, मैं निर्मोही और कृतघ्न सही। तुम तो वड़े प्रीतिमान हो; देखें इस प्रीति और शुभचिन्तकताके आधीन होकर आज क्या वहादुरी करोगे?

(२) तुम तो अभी संसारको छोड़ते थे? संसारका छोड़ना काम और लालच छोड़नेसे है। वैराग्य वस्त्रके छोडनेसे नहीं। और वस।

नाथूराम—ईश्याई वखतमें तो आदमीरी तोल पड़े। (१)

सुखवासीलाल—(मनमें) अब इस दौलते वेअंदाज को ऐसी हिकमतसे गायब करना चाहिये जिसमें पीछे कुछ सुराग न लग सके। (प्रकट) हमारा काबू लगेगा जहांतक हम इस मालके अलहदा करनेकी जरूर कोशिश करेंगे मगर इस बातमें पूरे कामयाव न हुए तो बाकी कुल असबावको बत्ती दिखा देंगे। इला अपने आकाय नान-दारका माल दुश्मनके तहतः तसर्रुफमें कभी नहीं जाने देंगे। (२)

चौवेजी—भय्या! जो आग लगाओ तो पहले मोदों अपनों कूंडी सोंटा उठाय लैवे दीजो।

नाथूराम—यो वखत इण तरे गुमापारी नहीं छे, ढोलकियां सारा काम विगड़ जासी। (३)

इस निर्बुद्ध खिदमतगारका हाल देखनेमें आया। इस मूर्खके मनमें रणवीरसिंहका विश्वास बैठ गया। इस कारण ये उनको ईश्वरसे अधिक समझता है, उनके लिए अपनी जान हतेलीपर लिए फिरता है परन्तु ये बात हमारे फायदेकी है। क्योंकि उसके अलग होनेसे हमको किसी तरहका डर न रहेगा। अच्छा, अब इस मालके पचानेका उपाय करें। (प्रकट) जिस मंदभाग, वे हिम्मत (मनुष्य) को किसी तरहके काम करनेकी हिम्मत नहीं होती वो सदा इसी तरहकी थोथी बात बनाकर कामसे जी छिपाया करता है परन्तु हम ऐसे बावके नहीं जो इस मूर्खकी बातोंमें आकर अपने जुम्मेका काम भूल जांय।

(१) ऐसे ही समयमें तो आदमीका हाल मालूम होता है।

(२) (मनमें) अब इस असंख्य द्रव्यको ऐसी हिकमतसे उड़ाना चाहिये जिसमें पीछे कुछ पता न लग सके। (प्रकट) हमारा बस चलेगा जबतक हम इस मालके अलग करनेका अवश्य उपाय करेंगे परन्तु ये उपाय पार न पड़ा तो बाकी सब असबावमें आग लगा देंगे पर अपने मालिकका माल वैरीके अधिकारमें कभी न जाने देंगे।

(३) ये समय इस तरह खोनेका नहीं है, देर करनेसे अब काम विगड़ जायगा।

मुखयासीलाल—अच्छा, हम अभी इसकी तदबीर करते हैं लेकिन आप खोफनाक जगहसे अपने दौलतखानेको तशरीफ ले जांए। (१)

नाथूराम—ठीक छे, हूं तो जाऊं छूं। (२)

(जानेको तयार हुआ)

चौबेजी—भय्या! मोहूंको संग लेत चलियो। (३)

(सब गए)

इति चतुर्थ गर्भाङ्क।

चौथा अङ्क समाप्त।

---

(१) अच्छा, हम अभी इसका उपाय करते हैं परन्तु आप इस भयानक जगहसे अपने मकान को पधारें।

(२) ठीक है, मैं तो जाता हूं।

(३) भाई मुझको भी साथ लेते चलना।

अथ पञ्चम अंक प्रारम्भ ।

अथ प्रथम गर्भाङ्क ।

स्थान राजमहल और उसके पास मैदान ।

(प्रेममोहिनी मालती समेत राजमहलमें बैठी है ।)

प्रेममोहिनी—सखी ! इस भयङ्कर लड़ाईका क्या परिणाम होगा ? पिता इसको बन्द करने गए हैं परन्तु अबतक भूमिमें बिजलीकी तरह तरवारोंकी झलक बारम्बार दिखाई देती हैं। मैं अबला, इस समय प्यारे प्राणनाथकी सहायताका क्या उपाय करूं ? ईस्वरने मुझको पुरुष क्यों न बनाया ? जो मैं पुरुष होती तो आज प्राणपतिके साथ जाकर अपना जन्म सफल करती ।

मालती—रणधीरसिंहकी वीरतामें किसी तरहका सन्देह नहीं, पर वैरियोंका विस्तार देख मेरी छाती धड़कती है ।

प्रेममोहिनी—सखी ! रणधीरसिंह मेरे सर्वस्व हैं, चन्द्रमा और चांदनीकी तरह मैं अपना प्राण उनके आधीन समझती हूं परन्तु रणसे विमुख होकर प्राणप्यारे फूलोंकी सेजपर सोवें तो उसके बदले रणमें वैरीके हाथ उनका शरशय्यापर सोना मुझको अच्छा लगता है ; मैं तत्काल तन तजकर प्यारे प्राणपतिकी चरण सेवामें चली जाऊंगी ।

मालती—राज नन्दिनी ! कभी ऐसा सन्देह मत करो, रणधीरसिंहका रण विमुख होना किसी तरह संभव नहीं । उनका बल तुम अपने नेत्रोंसे अच्छी तरह देख चुकी हो । नदीकी प्रवाहकी भांति सारे भूमण्डलमें उनके बलका वेग रोकनेवाला तुमको कौन दिखाई देता है ?

प्रेममोहिनी—सखी! ये तो मैं भी समझती हूं, पर अत्यन्त प्रीतिके कारण मेरा चित्त ठिकाने नहीं रहता। जबसे मेरे नयनोंने उनका रूप-रस पीया, मुझको उनकी माधुरी मूर्त्तिके सिवाय कुछ नहीं दिखाई देता।

मालती—(मनमें) प्रेममोहिनीकी प्रेम कली खिलकर पुष्पके आकार हो गई, अब इसकी सुगन्धिका छिपना वहुत कठिन है। (प्रकट) राजकुमारी! चेत करो, अन्दाज सिरकी सब बातें अच्छी नहीं लगती।

प्रेममोहिनी—सखी! दूसरोंके उपदेश करनेको वहुत लोग चतुर होते हैं परन्तु अपने ऊपर बीते जब मालूम हो!

मालती—स्त्रीका भूषण लाज है।

प्रेममोहिनी—जो ये लाज महाराज कुमारकी प्रीति रोकनेवाली होय तो इसको भूषण नहीं दूषण कहना चाहिये, स्त्रीका भूषण तो पति है।

(झरोखेमें चम्पाका प्रवेश)

चम्पा—जैसे कमल वनको रूंधकर मतवाला हाथी आता हो, तैसे रणधीरसिंह इस समय रण भूमिसे इस तरफ चले आते हैं! क्रोधके कारण उनका मुख प्रातःकालके सूर्यकी तरह लाल हो रहा है, उनके नेत्रोंसे ज्वालामुखी पर्व्वतकी तरह झल निकलती है। उनके तेजकी चमकसे इस समय उनकी तरफ दृष्टि बांधकर नहीं देखा जाता!

(रणधीरका राजमहलके नीचे, मैदानमें प्रवेश)

प्रेममोहिनी—(रणधीरको देखकर) रणधीरसिंहके मनोहर मुख कमलपर रुधिरके छींटे और पसीनेकी बूंद मोतीके समान बड़ी सुन्दर दिखाई देती हैं! और टेढ़े टेढ़े बालोंकी घूंघरवाली जुल्फोंपर रज पड़नेसे ऐसा रूप हो गया है मानो काले भौंरे कोमल कमलका रस पीनेके लिए चारों तरफसे उमड़े चले आते हैं।

रणधीर—(प्रेममोहिनीकी तरफ देखकर, मनमें) जिस बातके लिए मैं यहां आया था वो बात हो गई, अब मैं सब तरह सुखी होकर संसार छोड़ूंगा। (प्रेममोहिनीसे आंख मिला, निरास हो, धीर स्वरसे, प्रकट) आनन्दकी रातके साथ दीपकका तेल पूरा हो गया, इस कारण अब ये (दीपक) बुझता है ; पर अंधेरेको जड़मूलसे मिटाकर बुझता है। इसके लिए पतङ्ग कुछ चिन्ता न करे। उसको इससे अच्छे, अच्छे दीपक संसारमें मिलेंगे (मूर्छित होकर गिर पड़ा) (सखियों समेत प्रेममोहिनी गुलाव-पास लेकर जल्दीसे रणधीरके निकट आती है)।

प्रेममोहिनी—(रणधीरका सिर गोदमें ले, उसके मुखपर गुलाव छिड़क, मालतीसे) सखी ये जहाज क्या वड़ी वड़ी आंधियोंसे वचकर किनारेपर आए पीछे डूब जायगा !

मालती—राजकुमारके लिए वैरीके वाणोंसे तुम्हारे नेत्र अधिक पैने निकले। देखो, तुमसे आंख मिलतेही राजकुमारका रुधिर जोश खाकर रोम रोममें झलक आया, देहकी सुधवुध जाती रही।

प्रेममोहिनी—सखी! तैंने राजकुमारके वचन भी सुने, तलवारका घाव औषधिसे भर जाता है पर वचनका घाव किसी तरह नहीं मिटता। क्या संसारमें ऐसे भी लोग हैं जो एकसे प्रीति करके दूसरेकी इच्छा रक्खें ? सुखके साथी वन, दुखमें अलग हो जायं ? क्या पङ्ख हीन पतङ्ग दूसरे दीपकके पास जा सकता है ? अथवा मणि विना सर्प और जल विना मीनके जीनेकी आस है ? (आंसू डाले)

रणधीर—(सचेत हो, प्रेममोहिनीकी तरफ देख, धीरी आवाजसे) जब एक फूल वृक्षसे झड़ गया तो फिर हजार उपाय किए वृक्षमें फूल नहीं लगता। उसके वास्ते भौंरेका सोच करना वृथा है। भौंरेको चाहिये कि उनकी प्रीति छोड़कर और फूलका रस लें। (कुछ नेत्र वन्द होते हैं)

प्रेममोहिनी—(आंसू पोंछकर, गद्गद स्वरसे) हा प्राणनाथ ! मेरे कम्पते हृदयको ऐसे ऐसे वचन कहकर क्यों अचेत करते हो ? प्राण गए पीछे शून्य शरीरमें क्या हो सकेगा ? क्या शब्दसे अर्थ जुदा है, जो आप मुझको अपनी देहसे अलग समझकर ऐसे वचन कहते हो ! क्या आपके विना ये देह पलभर ठैर सकती है ? आप नहीं, तो इस देहपर कुछ बीते, चाहे इसका एक एक रोम सांप बनकर डसे, चाहे आकाशसे बिजली गिरकर इसको भस्म कर डाले। नदीका समुद्रसे मिलाप हुए पीछे कभी वियोग नहीं होता।

रणधीर—(थोड़ेसे नेत्र खोलकर, टूटतीसी वाणीसे) प्यारी मुझको तुम्हारी सच्ची प्रीति देखकर बड़ा सन्तोष हुआ। संसारमें अबतक पतिव्रता (स्त्री) हैं ! अच्छा, तुम प्रसन्न रहो ; यह हंस तो अब जग जंजालसे निकलकर मानसरोवरको (हरि चरणोंमें) जाता है। (नेत्र बन्द हो गए)

प्रेममोहिनी—(आंखोंमें अंसू भरकर) प्यारे रणधीर ! तुम्हारा ये क्या हाल हुआ ? तुम्हारा मनोहर मुख गुलाबके फूलकी तरह पलभरमें कैसे कुम्हला गया ! हा ! चन्द्रमाकी पूरी कला हुए विना राहु उसको कैसे ग्रसने लगा ! विना बादल ये बिजली कहांसे टूट पड़ी ! हे जीवितेश्वर ! इस अबला अनाथकी ओर एकबार आंख उठाकर तो देखो ! हाय ! धरती फट जाय तो मैं उसमें समा जाऊं ! !

हा ! मम प्राण महीप सुत कहां रहे सुख मोर।
बांह गहेकी लाज तज चले प्रेम तृण तोर॥

हे प्राणेश्वर ! आपकी यह दशा देख मेरा कलेजा फटता है। हाय ! जल विन नदी, कमल विन सरोवर, पुष्प विन बाग, सुगन्धि विन पुष्प, व्यर्थ हैं।

रणधीर—(नेत्र खोलकर, बहुत धीरे स्वरसे) प्रेम—प्रेम – प्रे——(नेत्र बन्दकर प्राण त्याग दिये)।

प्रेममोहिनी--"प्रेम"--हा! "प्रेम"--प्राणनाथके मुखसे इस समय भी "प्रेम" निकलता है! इस अथाह "प्रेम" की महिमा कौन कहि सके? ऐसे प्रेमी विन प्रेममोहिनीके जीवनपर धिक्कार है। ये दासी आपके चरण कमलोंसे अलग नहीं रह सकती! (रणधीरके चरणोंपर सिर रखकर शरीर तज दिया)।

मालती--(चम्पासे) सखी! इन दोनोंकी प्रीतिका ये परिणाम हुआ! हाय! निर्दई विधाताने दोनोंको एक वाणसे वेध लिया!

चम्पा—जैसे सूर्य्य चन्द्रमाके मिलनेसे (अमावसको) अधिक अंधेरी होती है, तैसे आज इन दोनोंके मिलनेसे दशा हुई! ये दोनों क्या इस लायक थे?

मालती—सखी! ये दुःख देखकर हमारा तो कलेजा फटता है! हाय! दुष्ट दैवने हमको इससे पहले क्यों न उठा लिया!

चम्पा--हमारे जाने तो आज प्रलय हो गई, संसारमें अब हमारा कौन है? हमसे तो ये दुःख नहीं सहा जाता!

(सूरतके महाराज आते हैं)

सूरतपति—(देखकर करुणासे) ये क्या! रणधीर और प्रेममोहिनीको ईश्वरने सोनेसे सुगन्धि मिला दी थी, पर हाय! (आंखोंमें आंसू भरकर गद्गद स्वरसे) मालती--(मुखसे कुछ नहीं बोला गया, संकेतसे वृत्तान्त पूछने लगे)।

मालती--(रोकर करुणासे) महाराज! ये हृदय विदारक वचन कहनेको मेरी जीभ नहीं उथलती। मैं क्या कहूं? (फूट, फूटकर रोने लगी)।

सूरतपति--(कातर स्वरसे) रणधीर और प्रेममोहिनीका मिलाप कैसे हुआ?

मालती--कल रात्रिके समय रणधीरको राजनन्दनीने अपने मनसे वरा था। आज उनकी यह दशा देख हमको अनाथकर......(रोने लगी)।

सूरतपति हाय!!! (मूर्छित होकर गिर पड़े)।

(मालतीने गुलाब छिड़का, चम्पा वस्त्रसे पवन करने लगी)

सूरतपति—(सचेत होकर) बेटी यह क्या होता है ? इस स्वयंवरका ये अन्त हुआ ! हाय ! मेरी जन्मभरकी कमाई पलभरमें लुट गई ! ये विवाहका सामान इनके क्रियाकर्ममें काम आवेगा ! मोहिनी ! तू अपने दुखिया बापसे एक बात कहे बिन उसको दुखसागरमें छोड़कर कहां चली गई ? हाय ! हमने ऐसा क्या पाप किया होगा, जिसका यह फल है ! हे पापी प्राण ! तू इस अधम शरीरको अबतक क्यों नहीं छोड़ता ! अरे जब ऐसा विकराल दुख सह लिया तो कौनसा दुख भोगकर छोड़ेगा ! (बिलख बिलखकर रोने लगा)।

मालती—(चम्पासे रोकर) सखी ! हमारे भागमें क्या दुष्ट दैवने यही लिख दिया था कि रणधीर और प्रेममोहिनीके लिए फूलोंकी सेजके बदले चन्दनकी चिता बनायं ! (चिता बनाने लगी)।

(सूरतके मन्त्रीका प्रवेश)

मन्त्री—(बहुत रोकर) हाय ! हमारा नसीब फूट गया, हमारा सर्वस्व लुट गया हमारी सब आस टूट गई, हमारे नेत्रोंका प्रकाश जाता रहा ! हे कठोर दैव ! तुझको हमपर कुछ दया न आई ! हाय ! हम अंधोंके टटोलकर चलनेकी लकड़ी छीनकर तू क्या सुखी होगा ? हे धर्मराज, हमारी विनय सुनकर हमको जल्दी इस दुख सागरसे निकालो।

सूरतके महाराज—मन्त्री ! ऐसे ऐसे वचन कहकर क्यों मेरे व्याकुल मनको अचेत करते हो ! धीरज धरो, संसारके सब दुखोंको पहले पापोंका फल समझना चाहिये।

मन्त्री—महाराज ! राजकुमार रिपुदमनसिंहके कुसमय संसार छोड़नेका दुखदाई वचन आपसे कौन कह सके।

सूरतके महाराज--(आंसू भरकर) हा ! ये वचन बर्छीकी तरह मेरे कलेजेमें पार हो गया ! मन्त्री तुम क्या कहते हो ? हमारे दोनों नयनोंका प्रकाश एक सङ्ग जाता रहा ! रिपुदमनसिंह परलोक गए ! हा ! रिपुदमन प्राणधार, हा वीर, हा ! क्षत्रीकुलभूषण ! हा ! आज्ञाकारी प्यारे पुत्र ! मुझसे विना आज्ञा लिए कोई काम न करते थे सो आज मुझसे विना पूछे किस कारण इतनी जाला की, मुझको उत्तर दो !

मन्त्री--हाय ! इस दुःखसागरका किनारा कहीं दूरतक नहीं दिखाई देता, इसमें डूवना ही हमारे लिए पार लगना है ।

सूरतके महाराज--क्यों मन्त्री हमारे दुःखी हृदयको जलानेके लिए ये आग कहांसे प्रकट हुई ?

मन्त्री--कहते हैं कि रणधीरसिंहकी मित्रतासे राजकुमारने ऐसा किया ।

सूरतके महाराज--मित्रके लिए प्राण देनेकी तो हमारे वंशमें परम्परासे चाल है, परन्तु मैं बीच धारमें डूब गया, मुझको इस बुढ़ापेमें रास्ता दिखानेवाला कौन है ? संसारमें पुत्र शोककी बराबर कौनसा दुख होता है ? जब कोई राजा विना सन्तान मरता है तो उसका राज योंहीं औरोंके राजमें मिल जाता है । हाय ! यही हाल अब हमारे राजका होगा ! हमारा राज अबतक तो बड़ोंके पुण्यसे हरा भरा रहा परन्तु अब हमारे बड़ोंको वस्त्रका पल्ला निचोड़कर जल देनेवाला भी कोई न रहेगा ।

मन्त्री--महाराज क्या करियेगा, दैव कोप प्रबल है !

सूरतके महाराज--(करुणा करके) मन्त्री ! मुझको दैव कोपसे किसी बातका भरोसा नहीं रहा ! हमारे कुलपर दैव विमुख है ! हाय ! हमारे कुलका इस तरह अन्त आया ! इसी दिनके लिए हम सन्तानकी चाहना करते थे ! ओ रिपुदमन ! ओ प्रेममोहिनी ! मेरे प्राणाधार ! मेरे जीवन ! मैं फिर कब तुमको अपनी छातीसे

लगाऊंगा, कौनसे जन्ममें तुम्हारा मुख चन्द्र देखूंगा, तुम्हारा मुख स्मरण करनेसे कलेजा फटता है! हाय! तुम कहां चले गए! तुमने मुझको छोड़ दिया, तुमको मेरे बुढ़ापेपर कुछ दया न आई, मेरी एक बातका जवाब तो दो, मेरी तरफ आंख उठाकर तो देखो। तुमको एक समय फूलोंकी सेजपर नींद नहीं आती थी अब तुम कठोर भूमिमें सदाके लिए ऐसी गहरी नींद सोते हो। हाय! तुम्हारा यह हाल देखकर धरती माताकी छाती भी न फटी। पर्वत, आकाश और नदी नाले भी वैसे ही बने रहे; तुम्हारा यह हाल हो, और मैं जीता रहूं! मेरी छाती बोझसे दबी जाती है, मेरे हाथ पांव गिरे पड़ते हैं, मुझको आंखोंसे कुछ नहीं दिखाई देता, कानोंसे सुनाई नहीं देता, मेरे प्राण जाते हैं। मुझको प्यारी सन्तानके पास ले चल! अरे मुझको प्यारी सन्तानके पास ले चल! प्राण चले मुझको——(मूर्छित होकर गिरता था सो मन्त्रीने रोक लिया)।

मन्त्री--महाराज! महलमें महारानीजी अचेत पड़ी हैं, यहां आप ऐसे अधीर हो रहे हैं, इस दशामें हमलोगोंको कैसे धीर्य रहै।

(वीरवेशसे कवच और शस्त्र सजाकर एक योधा आता है)

योधा—आज इस नगरमें किस कारण हा हा कार हो रहा है? बहुतसे मनुष्य मूर्छित, मृतक, अङ्गभङ्ग, दर्दसे व्याकुल, रुधिरमें डूबे हुए, धरतीपर लोटते हैं, तरह तरहके कपड़े और गहने बिखरे पड़े हैं, कितनेक मुर्दोंकी छातीसे बाण निकलते हैं, कितनेक घायल अपने घावपर बिना पट्टी बांधे खाली घोड़ेको देख बिसूरते हैं, बहुतसे वीर धरतीकी तरफ देखकर बिलख रहे हैं, कितनेक क्षत्री रणभूमिमें पड़े हुए कातर स्वरसे जल जल पुकारते हैं, कहीं किसी वीरकी स्त्री अपने मरे हुए पतिका सिर गोदमें ले सती होती है, कहीं किसी वीरकी माता अपने बेटेके लिए रो रोकर प्राण खोती है। इस लड़ाईका क्या कारण होगा? कुछ हो। मुझको एकबार सूरतपतिसे

अवश्य मिलना है । मैंने बहुतसे लोगोंसे उनका हाल पूछा, पर किसीने मेरी बातका जवाब न दिया । अच्छा, अब मैं आप ढूंढ़ता हूं । (कुछ आगे बढ़ा) ।

सूरतके महाराज--(कुछ चेतना पाकर) मन्त्री ! मैं अपना शरीर छोड़कर प्यारी सन्तानसे मिलने जाता हूं परन्तु न जाने शरीर छोड़े पीछे भी मुझ आत्मा-घातीसे उनका मिलाप होगा या नहीं !

योधा—(आगे बढ़कर) आगे ऐसा कौन मनुष्य खड़ा है जिसके गहनेकी झलक सूर्यकी किरणोंसे मिलती है । मेरे जान तो ये सूरतके महाराज होंगे ! (आगे बढ़कर एक पत्र देने लगा)

सूरतके महाराज--किसका पत्र है ?

योधा--आप पढ़ लीजिये ।

सूरतके महाराज--मन्त्री इसे पढ़ो, मेरी आंखोंमें जल छा रहा है ।

मन्त्री--(पत्र लेकर पढ़ने लगा) ।

"श्रीसूरतपति राय !

हमारे आपके बीचमें पीढ़ियोंसे वैर है और वैरीसे वैर लेनेकी सबके मनमें चाहना होती है, परन्तु वनमें जागते सिंहके मारनेकी बड़ाई है । बन्धनमें निरूत्साही सिंहके मारनेसे जस नहीं मिलता । एक वीरपर अनेक वीरोंका चढ़ाई करना पाप है, इसी तरह सहायता मांगनेवालोंकी सहाय न करना भी महापाप है । मित्रका उपकार सब करते हैं परन्तु बैरीका उपकार करनेमें उससे अधिक जस मिलता है:--

करै बुराई पै भली सो साधू अवरेख ।
करै भलाई पै भली तामें कहा विशेष ॥

क्षत्री अपनी हारको मौतसे बढ़कर समझते हैं परन्तु रणधीरके लिए हमने हार मानी । राजकुमार कुछ दिनसे अपना देश छोड़कर आपकी राजधानीमें जा बसे हैं जो

आप उनको समझाकर हमारे पास भेज देंगे तो आपका ये उपकार हम कभी न भूलेंगे। रणधीरसिंहको लड़ाईमें वीर रसका औतार कहना चाहिये। वो वीर एकाएकी वैरीकी बड़ी सेनासे दब जाय ऐसा नहीं है, तो भी पुत्रकी प्रीतिसे हमारा कलेजा धड़कता है! हमको निश्चय है कि आप ऐसे समयमें खोटा लालच कभी न करोगे।

सज्जन तजत न नीति पथ यद्पि प्राण तज देत।
भूखो रहत मृगेन्द्र तउ तृण न कबहुं मुख लेत॥

सज्जनसे सब तरहकी आस होती है।

सुजन कठिन तउ हेम सम पिगलत औसर पाय।
तृण सम छोटे मनुजको पिगलनको न उपाय॥

परोपकारसे कीर्ति मिलती है और कीर्ति ही आत्माका भूषण है।

मूरतसे कीरत बड़ी बिना पंख उड़ जाय।
मूरत कबहु न थिर रहै कीरत कबहु न जाय॥

अब जो आपको सची कीर्तिका लालच होय तो अपना स्वार्थ छोड़कर परोपकार करो।

सरिता वारि न पियत कहुं तरू न कबहुं फल खांहिं।
वारिद भखत न अन्न कहुं सज्जन पर हित मांहि॥

हमारी कामना साधारण मनुष्यसे पूरी होने लायक नहीं थी इस कारण आपको लिखा गया।

ऊंचे जनकी कामना नीचनते न पुराय।
हरत ताप गिरिको जलद सरिता रहत लजाय॥

आगे आपको अपने कामका अधिकार है। आप नीतिसे हमारे लेखको अंगीकार करोगे तो हम आपकी श्री हरैंगे और आप अनीतिसे हमारे लेखको न अंगीकार करोगे तो हम आपकी श्री न हरैंगे।” (१)

श्रीपाटनपतिरायका जुहार।

——*——

(सूरतके महाराज चकित हो कभी पत्र, कभी जोधा, कभी रणधीर, कभी प्रेममोहिनीकी तरफ देखने लगे, परन्तु मुखसे एक अक्षर न निकला। आंखोंमें आंसू भरकर चुप रह गए।)

मन्त्री—(जोधासे) इस समय महाराजका चित्त ठिकाने नहीं है। तुमको पत्रका जवाब पीछेसे मिलेगा।

(जोधा जाता है।)

(सूरतके महाराजका एक नौकर आता है।)

नौकर—(घबराहटसे) महाराज! पाटनपति रायकी सेना टीड़ी दलके समान उमड़ी चली आती है।

सूरतपति—(निरास होकर) हम तो इस खेतमें खेत रहे, अब इस अभागे नगरका कुछ हो! चाहे इसपर ओले गिरे, चाहे टीड़ी दल टूट पड़े, हमको इन बातोंसे क्या काम?

मन्त्री—महाराज जबतक आपके शरीरमें प्राण है, आपको प्रजाकी रक्षा करनी चाहिये। बड़े लोग विपत्ति पड़नेसे कभी अपनी रीत नहीं बदलते।

---

(१) आपने नीतिसे हमारे लेख को मंजूर किया तो बैरीको पत्रमें चार श्री लिखते हैं, उसके बदले हम आपको एक श्री हरकर मित्र भावसे आपको तीन श्री लिखा करेंगे और आपने हमारे लेखको ना मंजूर किया तो हम आपपर चढ़ाई करके आपकी राजश्री हरेंगे।

बड़े लहत सुख सम्पदा, बड़े सहत दुख द्वन्द ।
उडुगण घटत न बढ़त कहुं, बढ़त घटत नित चन्द ॥

(मालतीसे) जल्दी रणधीर और प्रेममोहिनीको चितापर विराजमान कर ।

(सूरतके महाराज बेसुध हो गए ।)

मालती—हाय ! राजकुमारीसे सदाके लिए वियोग होता है ! एक वार प्रेम-मोहिनीकी मोहिनी मूर्त्ति तो मन भरकर देख लूं !!!

(प्रेममोहिनीके मुखकी तरफ टकटकी बांधकर देखने लगी ।)

चम्पा—सखी ! रणधीर और प्रेममोहिनीके प्राण चन्द चकोरकी तरह अबतक इनकी मृत देहके आसपास फिरते हैं !

(नेपथ्यमें घोड़ोंकी टाप सुनाई दी ।)

मन्त्री—मालती ! जल्दी कर, देर करनेमें सब बात विगड़ जायगी ।

(मालती और चम्पाने रोते रोते रणधीर और प्रेममोहिनीकी मृत देहको चितापर रखकर अग्नि-संस्कार किया ।)

मन्त्री—(सूरतपतिको वस्त्रसे पवन करके) महाराज ! चेत करिये, वैरी सनमुख आता है !

सूरतपति—(सचेत होकर, करुणासे) इससे अधिक वैरी हमारा क्या करेगा ? हमारा तो होना था सो हो चुका !!! (चिताकी तरफ देखकर) हाय ! ये चिता नहीं जलती, मेरा हृदय जलता है ।

मालती—सखी ! हमसे ये दुख नहीं देखा जाता । हाय ! हमारी मौत कहां छिप रही ! (रोती हुई दोनों जाती हैं ।)

सूरतपति—(अत्यन्त करुणापूर्वक गद्‌गद स्वरसे) हे दैव ! तुमने अन्त समय भी मेरी मोहिनीका मुख मुझको मन भरकर नहीं देखने दिया ! हाय ! मेरे जीतवको धिक्कार है !!! (शोकसे व्याकुल हो खड़े रह गए।)

(दो मन्त्री और सेनापति समेत पाटनके महाराजका प्रवेश)

पाटनपति—मन्त्री ! मैं पत्रके जवावकी वाट देखे विना रणधीरसे मिलनेकी उमङ्गमें यहां चला आया, परन्तु अपनी करतूत विचारकर मेरे पांव पीछेको हटते हैं। मेरा कलेजा धड़कता है। मेरे आनेकी चर्चा सुनकर कहीं रणधीर यहांसे चला न जाय। मैं कौनसा मुंह लेकर उससे वात करूंगा। हाय ! वो घड़ी कव आवेगी जव मैं अपने लालको अपने गले लगाऊंगा।

पाटनका सेनापति—(चारों तरफ देखकर) हमारे आनेसे पहले यह वड़ा भारी खेत पड़ा है, न जाने इस लड़ाईका क्या कारण होगा !

पाटनका मन्त्री—सामने सूरतपति खड़े हैं, इनके मिलनेसे सव भेद खुल जायगा।

सूरतपति—(आंसू वहाते हुए आप ही पास आकर) पाटनपति रायको सूरतपति रायका जुहार।

पाटनपति—आप प्रसन्न हैं ?

सूरतपति—जिनके भाग्यमें केवल दुःख लिखा है उनकी प्रसन्नता क्या ?

पाटनपति—क्यों ?

सूरतपति—(रोकर) मेरे वहते हुए आंसू आपको उत्तर देंगे।

पाटनपति—आपके इतने विलापका क्या कारण है ?

सूरतपति—रणधीरसिंह !

पाटनपति—इतने वीरोंके खेत पड़नेका क्या कारण ?

सूरतपति—रणधीरसिंह !

पाटनपति—सामने इस अग्निके प्रज्वलित होनेका क्या कारण ?

सूरतपति—रणधीरसिंह !

पाटनपति—आप क्या कहते हो ?

सूरतपति—क्या कहूं ? अपने वीर बेटेका पराक्रम देखो। संसारमें इसका जोड़ मिलना बहुत कठिन है, जैसे जलती हुई अग्नि सूखे वनको जला कर आप बुझ जाती है, तैसे ही वीर रणधीरसिंहने सब वैरियोंका अन्त लेकर अपना प्राण दिया !

सूरतका मन्त्री—हमारे राजकुमार रिपुदमनसिंहने पवनकी तरह उनका बल बढ़ाया और प्रेममोहिनी उनके सङ्ग इस चितामें विराजमान है। (चिता दिखाई)

(सूरतके महाराज मूर्छित हो गए और मन्त्री उनको पवन करने लगा)

पाटनपति—हा रणधीर, हा ! प्राणाधार, हा ! लाल, हा ! वत्स ! (मूर्छित हो गया)।

पाटनका मन्त्री—(वस्त्रसे पवन करके) महाराज धीरज धरो, धीरज धरो।

सूरतपति—(होशमें आकर) हाय ! रणधीरसिंहका ये हाल देखकर हमारा कलेजा फटता है तो उनके पिताको कैसा दुःख होगा !

पाटनपति—(होशमें आकर) देखो, पृथ्वी कम्पायमान नहीं हुई, आकाशमें महाप्रलयके बादल नहीं छाए, चारों तरफसे प्रबल पवन नहीं चलने लगी, पृथ्वीको भस्म करनेके लिए सूर्यसे अग्नि नहीं प्रकट हुई, फिर रणधीरसिंहकी मृत्यु किस प्रकार बताते हो ! (चिताके पास जाकर) मुझको एक विमानमें गन्धर्व समेत अप्सरा दिखाई देती है। हाय ! अब मेरा मिलाप कैसे होगा !

सूरतपति—आपको ऐसे ज्ञानवान होकर धीरज छोड़ना उचित नहीं।

पाटनपति--(रोकर)--

सोरठा ।

"सब काहू सुख दीन दुख न दियो काहू कबहु ।
सो मर मोकों दीन भली करी रणधीरसिंह "॥

हा, रणधीर ! प्राण जीवन ! आज्ञाकारी ! शील सिंधु बेटा ! ऐसे अमोघ बली होकर सदा मेरी आज्ञामें रहते थे, मेरे डरसे थर थर कांपते थे, तुम्हारी सौतेली माके बहकानेसे मैंने लाज और प्रीति छोड़कर तुम्हारा अपमान किया, तुमको प्रबल शत्रुके राजमें रहनेकी आज्ञा दी । हा ! केसरकी कोमल पोदको कश्मीरसे उखाड़कर रेतके थड़में लगानेका विचार किया तो भी तुम मेरी आज्ञासे प्रसन्न होते थे, अपना जन्म सुफल समझते थे, अपनी सौतेली माको निज मातासे बढ़कर मानते थे, फिर बेटा ! अब हमने ऐसा क्या अपराध किया जो हमको दूरसे आते देख, अजानकी तरह जाते हो ; एक बेर मुख मोड़कर तो देखो ! (मूर्छित होकर गिरता है) ।

पाटनका मन्त्री--महाराज धीरज धरो, धीरज धरो ! संसारमें जिसने जन्म लिया वो एक दिन अवश्य मरेगा । संसारकी कोई चीज थिर नहीं, ईश्वरका नियम अमिट है । उसने अबतक जो चाहा किया, आगेको जो चाहे करेगा, हमको उसकी इच्छापर सन्तोष रखना चाहिये ।

पाटनके महाराज--(विशेष रोकर) हमको सबसे अधिक दुख उसके इस समय पर-लोक जानेका है। कोई बात समय बिन अच्छी नहीं लगती। फिर उदय होनेके समय सूर्य अस्त हो जाय तो धीर्य कैसे रहे ? (रणधीरका ध्यान करके) हे बेटा ! तुम्हारी थोड़ी उमरमें मैंने बहुतसे गुण देखे, तुमने वैरियोंके विनाशसे प्रजाको सब तरहका सुख दिया, मेरी सेवा करनेमें कोई बात बाकी न छोड़ी, जिसपर तुम अपनी लायकीसे सदा नीची आंख रखते थे, समुद्रकी तरह गम्भीर रहकर कभी किसीका जी दुखनेवाली

कठोर वात मुखसे नहीं निकालते थे, ये सब लक्षण तुम्हारे शीघ्र मरनेके थे, क्योंकि जो मनुष्य थोड़े दिन जीते हैं उनमें भलाई और वड़ाईके गुण वहुत पाए जाते हैं। हाय! मेरे जीतवपर धिक्कार है! मुझको तुम्हारे आगे अपने पछतावेसे मन खोलकर रोनेका समय भी न मिला! देखो! सब संसारमें माता पितासे सन्तानका पालन होता है परन्तु मैं उल्टा दुखदाई हुआ! संसारमें प्राप्त सुखको सुख कोई नहीं समझता परन्तु वो (सुख) नाश हो जाता है तब उसका वैभव मालूम होता है। हाय! तुम सरीके रत्नको मैंने कांच समझकर फेंक दिया, अब मणि विना सांपका जीना वृथा है!!!

सूरतपति—आप क्यों इतना विलाप करके अपने प्राणको खोते हो।

पाटनपति—देखो, मेरा प्राणप्यारा पुत्र मुझको सदाके लिए छोड़कर चला गया। उसके देखे विना मुझे स्वांस लेनेमें दुःख होता है, धीरज कहांसे आवे? मुझसे वढ़कर आजतक संसारमें कोई दुखिया न जन्मा होगा! हाय! मैं रणधीरसिंहका ये हाल देखनेके लिए यहां आया था! जब मैं यहांसे खाली रथमें वैठकर जाऊंगा तो मुझको देखकर नगर वासियोंकी क्या दशा होगी। परिवारवाले गद्गद स्वरसे रणधीरसिंहकी कुशल पूछेंगे तब मैं क्या जवाब दूंगा। रणधीरसिंहकी माता गऊकी तरह दौड़कर अपने वछड़ेसे मिलने आवेगी तो मेरा चित्त कैसे स्थिर रहेगा! वो अपने लालका हाल सुनतेही हाय मारकर मर जायगी तब मैं कैसे जीता रहूंगा! (मूर्छित हो गए)

पाटनका मन्त्री—(आंसू भरकर) क्या महाराजने सब प्रजाके अनाथ करनेका विचार किया है!

पाटनपति—(कुछ सुधमें आकर) मैं क्या अनाथ करूंगा दैवने ही अनाथ कर दिया। जैसे अमृत विन चन्द्रमा और पङ्खहीन पक्षीकी दशा होती है तैसे रणधीर विना

मेरा हाल है ! देखो, दुखिया मीन तो जलसे वियोग होते ही प्राण छोड़ देती है पर मैं उससे भी कठोर हूं जो रणधीरके वियोगमें अवतक जीतो रहा (आंसू डाल दिए)।

(एक वैरागीने आकर पाटनपतिको पत्र दिया)

पाटनपति—ये किसका पत्र है?

वैरागी—जिसको याद करके मेरे मुखसे एक अक्षर नहीं निकलता (आंसू भर आए)।

पाटनपति—(पत्र खोलकर पढ़ने लगे।)

"स्वस्ति श्री राजराजेन्द्र महाराज मुकुटमणि श्रीमान् महाराजाधिराज पाटनपति रायके चरणारविन्दमें ये आज्ञाकारी दास आंसू भरकर ये निवेदन करता है कि दासने अवतक आपकी आज्ञासे यहां वास किया पर अब वहुत दूरकी यात्राका समय आ गया है। कदाचित् आगेको कभी अपने नयन जलसे आपके चरण सरोज धोनेका समय न मिले। आपकी अकारण दया मुझको हरघड़ी याद आती है। जब मैं वालवुद्धिसे धूल धूसरित अङ्ग होकर आपकी गोद मैली करता अथवा किसी अनमिल वस्तुके वास्ते हट करके आपको खिजाता तब आप क्रोधके बदले प्यार करते थे। आपने बड़े परिश्रमसे मेरे मनमें विद्याका वीज वोया। पर हाय! इस ऊसर भूमिसे आपको कुछ फल न मिला। जिस देहसे माता पिताकी सेवा न वनी उसने संसारमें जन्म लेकर क्या किया! मुझको यहां रणधीरसिंह कुंवर, रणधीसिंह, कहनेवाले अनेक मिलते हैं परन्तु आपकी तरह प्यारसे रणधीर कहने वाला कोई न मिला। मुझको आजकी लड़ाईमें आपके चरणपर मस्तक रखकर जानेकी बड़ी लालसा थी परन्तु अब इस लालसाको मैं अपने सङ्ग लेजाता हूं। आपने जन्मसे अवतक मेरे सङ्ग जो उपकार किए हैं उनका बदला मैं किसी तरह नहीं दे सकता। संसारमें किसी करजदारको करज उतारनेकी सामर्थ्य नहीं होती तो वो साहूकारकी दृष्टि वचाकर परदेश जानेका

विचार करता है। आपने अपनी प्रसन्नतासे मुझको यहां आनेकी आज्ञा दी। मेरे प्राण प्यारे भाईको युवराज बनाया, मेरी माताकी कामना पूरी की। आपसे माता पिता पाकर मैं अपना अहोभाग्य समझता हूं। मैं अबतक कछुएके अंडेकी तरह आपकी असीससे यहां प्रसन्न रहा और जीवनने जीवनके अन्ततक मेरा साथ दिया। अब अन्त समय बड़ी दीनतासे मैं ये मांगता हूं कि आजकी लड़ाईमें मेरे प्राण जाय तो आप मुझ तुच्छ मनुष्यके लिए कुछ चिन्ता न करें, ईश्वर आपको मेरी दोनों माता और प्यारे भ्राता समेत सदा सुखी रखे। अब प्यारे भाईको असीस देकर दोनों माताओं समेत आपके चरण कमलोंमें अन्तकी प्रणाम करता हूं।

मैं आपका चरणानुरागी दास

रणधीर—सूरत।"

पाटनपति—(पत्रको हृदयसे लगाकर बड़ी करुणासे) जैसे शीत पड़नेसे कमल मुरझा जाता है तैसे रणधीरसिंहके शीतल वचनोंसे मेरा हृदय अचेत होता है। मेरे कुटिल हृदयमें रणधीरसिंहकी सीधी वाणी बाणकी तरह पार होती है। हाय! मुझ कपटीमें रणधीरसिंहकी ऐसी प्रीति क्यों हुई? रणधीरसिंहके एक एक गुण याद आनेसे मेरा कलेजा फटता है! मेरी रसना ऐंठी जाती है, मेरे नयनोंसे दिखाई नहीं देता, मेरे शरीरका फिरता रुधिर एक सङ्ग बन्द हो गया। अब ये पक्षी पिंजरेसे उड़ता है। मन्त्री मेरी अन्त समयकी विनय सुन———

(नेपथ्यमें बड़ा प्रकाश दिखाई दिया)

पाटनपति—(चौंककर) अरे ये क्या! मुझको भस्म करनेके लिये आग प्रगट हुई! अथवा आकाशसे बिजली गिरी? हे दैव! तेरा कैसा उपकार!

वैरागी—(रोकर) दुष्ट सुखवासीलाल आदिने रणधीरसिंहके महलमें आग लगा दी। हाय! प्रतापी रणधीरसिंहका माल यों धूलमें मिला! संसारमें लोभ सब खोटे कामोंकी जड़ है।

सूरतके महाराज—इन दुष्टोंको न्याय सभामें बुलाकर भली भांति दण्ड दिया जायगा।

पाटनके महाराज—हाय! हमारे नेत्र शीतल होनेके लिए दुष्ट दैवने रणधीरसिंहकी कोई चीज़ बाकी न छोड़ी। (वैरागीकी तरफ़ देखकर) तू कौन? जीवन! तैंने रणधीरसिंहका अच्छा साथ दिया। तेरा मेरे ऊपर बड़ा उपकार हुआ। तू मुझको प्राणसे अधिक प्यारा है। बेटा! आ, मेरे गले लग। मन्त्री! प्यारे जीवनको अपने राजमेंसे दस गांव देकर सब तरह सुखी करना।

वैरागी—(रोकर) महाराज! मुझको कुछ नहीं चाहिये। मेरी सब सम्पत लुट गई। अब ये पापी प्राण रणधीरसिंहका वियोग सहकर बचेगा तो परवतकी किसी कन्दरामें घटतीके दिन पूरे करेगा।

पाटनका मन्त्री—धन्य जीवन, धन्य! तू और तेरे माता पिता धन्य हैं!

सूरतपति—प्रेममोहिनीकी प्रतिमाके सङ्ग रणधीरसिंहकी रत्न जटित मूर्ति बनवाकर यहां रखनेकी मेरे मनमें इच्छा है।

पाटनपति—(करुणा करके गदगद् स्वरसे) रणधीर! बेटा रणधीर!! भर जवानीमें ये तेरा क्या हाल हुआ? ऐसी घड़ी अपने घरसे पांव निकाला कि फिर धरना ही नसीब न हुआ! मेरे बदले जमराजने तुझको क्यों बुला लिया, और तू अपने बूढ़े बापको छोड़कर कहां चला गया? हाय! मेरे अधर्मसे मेरा लाल वैरीके देशमें इस तरह इकला मारा गया! (विलाप करने लगे)

सूरतके महाराज--(आंसू भर) क्या आप मुझको अबतक अपना वैरी समझते हो ? मैं आपका सच्चा मित्र हूं। प्रेममोहिनीकी पहरावनीमें मैंने ये राज आपको दिया। जब रिपुदमनसे रणधीरसिंहकी मित्रता हुई, जब प्रेममोहिनीसे रणधीरसिंहका व्याह हुआ, तब हमारा आपका वैर कहां रहा ? जिनसे रिपुदमन और प्रेममोहिनीकी प्रीति थी वे हमारे सदाके मित्र हैं। प्यारे पाटनपति राय! रिपुदमन और प्रेममोहिनीकी मैं क्या बड़ाई करूं ? ये दोनों मेरे प्राणाधार थे। इनके देखनेसे मेरी आंखोंमें प्रकाश आता था, इनको देखकर मैं फूला न समाता था। हाय! जब ये दोनों सूर्य चन्द्रमा अस्त हो गए, जब हमारे नयनोंका प्रकाश जाता रहा, जब हमारे उत्तम कुलका इस तरह अन्त आया तब हम जीकर क्या करेंगे ? ऐसे जीतबपर धिक्कार है! हम अपनी प्यारी सन्तानके पास जाते हैं। (मूर्छित होकर गिर पड़ा और सूरतका मन्त्री वस्त्रसे पवन करने लगा)

पाटनपति--(विलाप करके गदगद् स्वरसे) जब प्यारा रणधीर न रहा तब मुझको इस राजपाटसे क्या काम ? (वैरागीकी तरफ़ देखकर) जीवन मुझको प्यारे रणधीरके पास ले चल, उसके बिना मेरे प्राण जाते हैं, मेरा कण्ठ रुक गया। हा! रणधीर! बेटा रणधीर! मुझ दुखियाको छोड़कर तुम स्त्री और मित्रके सङ्ग चले गए! तुमको मेरी दशापर कुछ दया न आई! अच्छा, पल भर ठैरो मैं अभी आकर तुमको गले लगाता हूं। मन्त्री! हमारे कुलकी नदीका राजहंस, हमारे विपत्तिकी ढाल, हमारे शरीरका चन्दन, हमारे नैनोंका चन्द्रमा अस्त हो गया! हम उसके वियोगमें प्राण छोड़ते हैं। हमारा राजपाट तुम्हारे आधीन है। हमारा आज्ञान बालक तुम्हारी गोद है। तुम पदवीमें छोटे पर बुद्धिमें बड़े हो। इस कारण हम हाथ जोड़कर अन्त समय तुमसे ये मांगते हैं कि हमारे स्नेहसे अपने व्याकुल मनको धीर्य देकर हमारे अनाथ कुलकी रक्षा करो। हमारे नष्ट कुलमें ये एक अंकुर बचा है

इससे हमारा वंश चलेगा और ये ही बड़ा होकर हमारा निपुत्री कुलमें पानी (पिंड) देनेवाला होगा। देखो, यह कहीं हमारी याद करके मर न जाय। इसको अपना समझकर अच्छी तरह रक्षा करना। इसको सुमार्गमें डालना (आंसू भरकर) और ये वड़ा हो! हमारी प्यारी प्रजाको प्राणसे अधिक रखना। भैया! तुम ज्ञानवान हो। हमारे अन्त समयके वचनको भूल मत जाना, तुम्हारे कामसे हमको परलोकमें सुख मिले उपाय करना। (मन्त्रीको छातीसे लगाकर) हमारा सर्वस्व तुम्हारे आधीन है। अब हमसे कुछ नहीं बोला जाता। अब हम तुमको अन्तकी असीस देकर विदा होते हैं। हाय! प्यारे रणधीर विना जगत अंधेरा लगता है!!! (मूर्छित होकर गिर पड़े)

पाटनका मन्त्री—(आंसू भर कर चरण दावते दावते) महाराज! आपने ये क्या विचारा? आप कभी ऐसा वचन न कहें। क्या सब संसारको डवोनेकी आपके मनमें है! रणधीरसिंहके वियोग रूपी अथाह समुद्रमें पाटनको जहाज वनाकर सब नगर निवासी चढ़ चुके अब आप खेवट होकर खेवेंगे तो बेड़ा पार लग जायगा, नहीं तो सब संसारके डूबनेका समय है। आपके नामसे जो काम होता है हमारे उपायसे नहीं हो सकता। हा! आपके विना हम क्या करेंगे? हे जगदीश! हमारा दुख हर! सब संसारका दुःख दूर कर!!!

(धीरे धीरे परदा गिरता है)

इति प्रथम गर्भाङ्कः।

पञ्चम अङ्क समाप्त।

॥ समाप्त ॥

मालती—जो वे इस समय न मिले ?

प्रेममोहिनी—इस समय क्या ? जन्मभर न मिलेंगे तो भी मैं उनकी हो चुकी ! मैंने ये प्रण करके यहां आनेका साहस किया है ।

मालती—तो मैं तुम्हारे साथ हूं, पर तुम अपने विचारपर दृढ़ रहना ।

प्रेममोहिनी—मैं दृढ़ हूं । (मनमें) मेरा सुभाव एक सङ्ग कैसे वदल गया ? प्रेमकी वर्षासे अनुरागकी "नदी" पल पलमें वढ़ती है । तरह तरहके मनोर्थ "भंवर" और मिलापकी तरंगे "लहर" के समान उठ रही हैं, कुल मर्यादके "वृक्ष" विना परिश्रम वह गए, धीरजकी नाव हात नहीं आती, इन्द्रियां "परदेशी" की भांत दूर हुई जाती हैं । उस शोभा "समुद्र" से मिले विना इस (नदी) के शान्त होनेका कोई उपाय नहीं दिखाई देता । हाय ! ये नदी रुकनेसे पल पलमें दुगनी होती है । (प्रकट) सखी ! मेरा मन इस समय वहुत व्याकुल है ।

मालती—देखो चौमासेकी नदीकी तरह वढ़कर मत चलो । अति कोई वात अच्छी नहीं होती । जो नदी वहुत वढ़कर चलती है उसका उतार थोड़े दिनेमें आ जाता है ।

प्रेममोहिनी—(मनमें) मेरा सुभाव तो ऐसा कभी नहीं था । हे मन ! तू दुर्लभ मनुष्यके लालचसे क्यों मोह जालमें फंसता है । हे निर्मोही ! तू जन्मसे मेरा था सो पल भरमें पराया हो गया । मैं जानती हूं कि कामदेवके वाणोंसे डर कर तैंने ऐसा किया होगा ! हे भगवान कुसुमायुध ! (कामदेव) अपको भी तीन लोकके विजयी होकर अवलाओंपर वल करते लाज नहीं आती ? जिसने अपने रूपसे आपका तिरस्कार किया उससे वदला नहीं ले सके ! मुझको अवला समझकर मेरे ऊपर कोप करते हो । हा प्राणनाथ ! अव तो आपके विना मेरा कोई साथी नहीं रहा । मैं केवल आपके मिलापकी आशासे इस भयङ्कर रातमें सवको छोड़कर यहां आई हूं ।

(रणधीरका प्रवेश)

रणधीर—(चलते, चलते दूरसे प्रेममोहिनीको देखकर) इस समय इस पुष्प वाटिकामें ये प्रकाश कैसा हो रहा है ! सूर्योदयका समय तो अभी नहीं हुआ, पर सूर्योदयका समय न होता तो कोयलकी कुहुक कहांसे सुनाई देती, कहीं कमलनीसे मिलनेको रूप बदल कर सूर्य तो यहां नहीं चले आए ? नहीं ; वे आए होते तो ये मूर्ति प्रफुल्लित दिखाई देती। ये तो पवनके झोकेसे दीपककी जोतके समान थरथराती है अथवा जलके संकोचसे सुवर्णकी लता मुर्झा गई हो, ऐसा इसका रूप दिखाई देता है। ये भी बड़े अचंभेकी बात है कि मैं ज्यों ज्यों इसके पास जाता हूं, मुझको कुछ अधिक अचरंजकासा रूप दिखाई देता है। आहा ! इस नागनसी अन्धेरी रातके सिरमें ये मूर्ति नागमणिसी झलक रही है, इसके देखने मात्रसे आंखोंमें प्रकाश आता है ! मैं पास जाकर इसकी शोभा निरखूं ।

मालती—(प्रेममोहिनीसे) तुम्हारे आए पहले रणधीरसिंह चले गए होंगे तो तुम कबतक उनकी बाट देखोगी ?

प्रेममोहिनी—मेरा मन साक्षी देता है कि रणधीर सिंह अबतक नहीं गए और जो कवियोंके वचनानुसार सच्चे प्रेममें कुछ भी आकर्षण शक्ति है तो वो आज इस मार्गसे अवश्य जायंगे ।

रणधीर—जिसको मैं कोयलकी कुहुक समझता था सो तो अब किसी मधुरालापी मनुष्यकीसी वाणी मालूम होती है परन्तु कुछ समझमें नहीं आती। अच्छा, आगे बढ़कर सुनूं। (आगे बढ़ा)

प्रेममोहिनी—(नेत्रोंमें जल भरकर) हे प्राणवल्लभ ! ये नेत्रोंका जल आपके लिए अर्घ पाद्य है और आपके बिराजनेके लिए आंखोंका आसन बनाया है अब आप आनेमें क्यों देर करते हो ?

रणधीर—(सुनकर) आहा ! ये तो कोई पद्मनी अपने प्यारे मित्रकी बाट देख रही है । देखो प्रेम कैसी वस्तु है जिसके लिए ये सुकुमारी इस समय यहां चली आई । इसके वचनोंसे ये उसपर अत्यन्त मोहित मालूम होती है पर अब मैं आगे कैसे बढ़ूं । (रुक गया)

मालती—(रणधीरको देखकर) भला मैं रणधीरको यहां बुला दूं तो मुझको क्या दो ? (रणधीरको दिखाकर) देखो वो सामनेसे कौन आता है ?

प्रेममोहिनी—(रणधीरको देख आश्चर्यसे धीरे) क्या है ! रणधीरसिंह ही मेरे सामने आ गए अथवा मेरे मनकी कल्पनासे मुझको ये प्रतिमा दिखाई देती है। मनकी कल्पना ही होगी मिलाप लायक मेरा भाग कहां।

रणधीर—(मनमें) इसने तो ये ऐसा वचन कहा कि मानों मेरा ही मार्ग देख रही थी। भला ये कौन है ? मेरे जान तो इसके समान रूपवती पृथ्वीके किसी विभागपर कोई न होगी । दैवकी विचित्र रचनाका ये एक प्रमाण है । अच्छा, इसके पास जाकर इसका हाल पूछूं। (आगे बढ़कर प्रकटमें) हे पद्मिनी ! तुम कौन हो, रति हो, देवांगना हो, नाग कन्या हो, किम्वा अप्सरा हो ? जल्दी अपना हाल कहकर मेरा सन्देह मिटाओ । तुमको देखकर मेरे मनमें अनेक तरहकी सम्भावना उठती हैं।

(प्रेममोहिनीने लजाकर शिर झुका लिया)

मालती—(लाजसे नीचे दृष्टि करके) प्रिय सज्जन! ये न रति है, न देवांगना, न नागकन्या, न अप्सरा। ये तो एक मानवी है। मानवी सिवा कोई नहीं। पर आपको ये आंधी रातका समय देखकर ऐसा कुछ भ्रम हुआ होगा, निस्सन्देह ये भयङ्कर रात मनुष्योंके चलने फिरने लायक नहीं है । आप इस स्थानमें चलकर थोड़ी देर आराम करें वहां आपको इसका सब हाल मालूम होगा ।

रणधीर—न हमको किसीका डर, न किसीके चरित्र जाननेकी इच्छा। हम कभी स्त्रीके वचनपर नहीं चले, हमको क्षमा करो। (मनमें) मेरे मनमें टूटता जवाब देकर इनसे अलग होनेकी बहुत इच्छा है पर न जाने मेरे मुखसे ऐसे नरम शब्द क्यों निकलते हैं?

प्रेममोहिनी—(मनमें) हे दैव! क्या मेरी आशाके फूल, फल आनेसे पहले ही मुरझा जायंगे?

मालती—हे बड़भागी! आपके मुखसे ये अक्षर अच्छे नहीं लगते। क्या आपको ऊखा अनिरुद्धकी कथा स्मर्ण नहीं है?

प्रेममोहिनी—(धीरे मालतीसे) सखी! तू मुझको यहां न ठैरने देगी?

रणधीर—दोष हो चाहे न हो, हम किसीकी देखादेखी काम नहीं करते। बड़ोंके कामपर नहीं, आज्ञा पर दृष्टि देनी चाहिये, हमको दूसरोंसे क्या? हमारे लिए ये बात अच्छी नहीं दिखाई देती।

प्रेममोहिनी—अमृत तो सबके लिए अमृत ही है इससे किसीको मरते नहीं सुना और आप क्या—(लजाकर चुप हो गई।)

मालती—(मनमें) मेरे आगे ये दोनों मन खोल कर बात न करेंगे (प्रकट) सखी! मुझको एक बड़ा जरूरी काम याद आ गया इस कारण अब मैं तो जाती हूं।

प्रेममोहिनी—तो क्या मुझको अकेली छोड़ जायगी? (पल्ला पकड़ लिया)।

मालती—अकेली क्यों? तुम्हारा रखवाला तुम्हारे पास है। (पल्ला छुड़ाकर चली गई)।

रणधीर—(उसके जाते, जाते) क्यों झूठी आस बंधाती हो, प्रर्वतपर कुआ खोदनेसे कहीं जल निकला है?

प्रेममोहिनी—वहां सोत नहीं, पर झरनेका जल मिलेगा।

रणधीर—परन्तु काले कम्बलपर दूसरा रङ्ग तो नहीं चढ़ता !

प्रेममोहिनी—देखो, ममीराके लगते ही उसका रङ्ग पलट जाता है ।

रणधीर—जैसे चकोरको चन्द्रमा देखे बिना मद नहीं आता तैसे अच्छे मनुष्य भी पराए धनसे सदा बचते हैं ।

प्रेममोहिनी—परन्तु चकोर चन्द्रमाको सूर्य समझकर दूर भागे तो दोष किसका ?

रणधीर—चकोरका ।

(प्रेममोहिनीने हंसकर सिर नीचा कर लिया ।)

रणधीर—(मनमें) मैं अपने मनको बहुत सम्हालता हूं पर इसके मिलापसे मेरा पत्थरसा हृदय आप ही मोम हुआ जाता है ! (प्रकट) मैं तुम्हारी पहेलीका अर्थ समझ गया, पर इससे पहले मुझको तुम्हारी प्रीतिका प्रमाण मिलना चाहिये ।

प्रेममोहिनी—सहृदय मनुष्यको तो उसका हृदय ही प्रमाण था, पर आप इसके प्रमाणमें अपनी अंगुलीकी अंगूठी देखिये ।

रणधीर—(अंगूठी देखकर मनमें) इस बातका कुछ जवाब नहीं बनता, परन्तु अभी धैर्य रखना चाहिये ! (प्रकट) बात बनानेमें पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्री स्वभावसे चतुर होती है ।

प्रेममोहिनी—(उदास होकर) क्यों जी ! पारस लोहेको सोना बनाता है, पर लोहा पारसको छोड़ चमक पत्थरसे क्यों प्रीति करता है ।

रणधीर—ये उसका सुभाव है ।

प्रेममोहिनी—हाय ! दैवने सबके सुभाव उलटे बनाए हैं । देखो, सूर्यकी गरम किर्णोंसे कोमल कमलका खिलना और चन्द्रमाकी कोमल किर्णोंसे चन्द्रकान्त मणिका पिघलना सब तरह उलटा दिखाई देता है ।

रणधीर—ये ईश्वरकी शक्ति है ।

प्रेममोहिनी—तो उसी शक्तिसे सूर्यमुखीका सूर्यपर मोहित होना समझो।

रणधीर—(मनमें) इसकी कल्पलतासी वाणीसे प्रेम सुगन्धित पुष्प तो जरूर झड़ते हैं, परन्तु इसके आगेसे हटकर इसकी परीक्षा लेनी चाहिये। (प्रकट) ऐसी बातोंसे तो कामी पुरुष मोहित होते हैं। मेरे ऊपर तुम्हारा मोहिनी मन्त्र नहीं चल सकता। (कुछ आगे बढ़कर एक वृक्षकी ओटमें छिप गया।)

प्रेममोहिनी—(उदास भावसे) हा! ये तो चले। मेरी विरहकी आगने इनके कठोर मनको कुछ भी न पिघलाया। घनघोर घटाके देखनेसे अभी तो प्यासे पपहियेके नयनोंकी प्यास भी न बुझने पाई थी कि, इतनेमें दक्षण वायुने सब काम बिगाड़ दिया। हाय! मित्रका वियोग भी कैसा दुखदाई होता है :—

"भर भर आवें नैन वियोगी, सूखत सकल शरीरा।
प्रीतिमान पहिचानें प्यारे, प्रीतिमानकी पीरा॥
रह सबते निरास व्है जगमें, सहै सकल दुख भोगू।
परम पुनीत विनीत मीत सों, दैव न देइ वियोगू॥
जो करतार सुनें मम विनती, देइ शक्ति कर छोहू।
अति दिल्दार पियार यारसों, कबहुं न होय बिछोहू॥
परबस परै जाय बर सरबस, सब तज होय विदेही।
सुपनेमें बिछुरे न विधाता, आपन यार सनेही॥
भोगे नर्क निकाय जन्मभर, रहै सदा थरतापी।
पै कबहूं बिछुरे न विधाता, आपन मीत मिलापी॥
धर्म कर्म बर त्याग जगतसों, फिरै प्रेम मतवारो।
पै कबहूं बिछुरे न विधाता, आपन प्राण पियारो॥

वर जल भीतर वसै जन्मभर, तप कर तनहि झुरावै ।
पै सुपनेहु अपने पीतमको, विध न वियोग करावै ॥
वरु तन राख लगाय चाह भर, खाय घरनके टूका ।
पै करतार पियार यारसों, कवहुं परै नहि चूका ॥
जातिपाति वरु गोय खोय कुल, सब तज होय भिखारी ।
कबहु न होय मीतकी मूरति, इन नैननते न्यारी ॥"

(गद्गद स्वरसे) हे अधम शरीर ! तैने प्यारे मित्रका सङ्ग न दिया तो क्या हुआ ? प्राण तो तेरा साथ छोड़कर उसके सङ्ग जाता है। हा मित्र ! आपके वियोगमें वहुत दिन जीनेके वदले तत्काल प्राण छोड़ देना मेरे मनको अच्छा लगता है। हे प्यारे आप मुझको छोड़कर चले गए; पर मैं आपसे अलग होनेकी सामर्थ्य नहीं रखती। (मूर्छित होकर गिरती थी, इतनेमें रणधीरने जल्दीसे आकर घुटनेके सहारे हाथोंपर रोक लिया।)

रणधीर—मुझसे वड़ी भूल हुई जो इस अति कोमल प्रियाकी प्रेम परीक्षाके लिए ऐसा कठोर विचार किया। ये लक्ष्मी मेरे नयनोंमें अमृतरूपी अञ्जनकी सलाईके समान लगती है और इसका शरीर मेरी देहको चन्दनके समान सुखदाई है, इसकी भुजा मेरे गलेमें मोतियोंकी मालाके समान शोभायमान है। अहा ! इसकी अचेत दशा भी मेरे मनको चैतन्य करनेवाली है।

प्रेममोहिनी—(उसी दशामें) हे जीवितेश्वर ! आपके वियोगसे मैं प्राण छोड़ती हूं पर आपके चरण मुझसे नहीं छोड़े जाते। मैंने जबसे आपका नाम सुना, मन, वचन, कर्मसे आपको स्वामी समझा। आपके सिवा कभी किसी पुरुषको पुरुष भी समझा हो तो सूर्य चन्द्रमा साक्षी हैं। आपने मुझको त्याग दिया परन्तु आपकी तरफसे मुझको कुछ खेद न हुआ क्योंकि पतिको स्त्रीपर सब तरहका अधिकार होता है। हा ! मग

अभागी देहसे आपकी कुछ सेवा न बनी ये बात मेरे मनमें खटकती है। अच्छा, अब भगवानसे प्रार्थना है कि जो मेरा दूसरा जन्म होय तो आपकी दासी होकर अपना जन्म सफल——(रुकगई)

रणधीर—ये मुझसे बड़ी भूल हुई। मैं कमलके कोमल पत्तेको आगपर रखकर तपाया चाहता था। हाय! मेरी बुद्धि जाती रही। अब मेरा प्रीतिमानसे प्रीति रखनेका नेम कहां गया? देखो, जैसे तोता मीठे फलोंको पहिचान पहिचानकर खाता है उसी तरह कामदेव अच्छे आदमियोंको ताक ताककर अपने बाणोंसे घायल करता है। (प्रकट) प्यारी क्षमा करो, क्षमा करो। इससे बढ़कर सुनेकी मेरी सामर्थ्य नहीं है। मुझको तुम्हारे अगाध प्रेमकी थाह नहीं मिली थी।

प्रेममोहिनी—(नेत्र खोलते ही लाजसे अलग खड़ी होकर) मेरी तो यही इच्छा है कि आप प्रसन्न रहो। आपकी प्रसन्नतामें मेरी प्रसन्नता है, आपके सुखमें मेरा सौभाग्य है। आपकी इच्छा होय, घड़ी दो घड़ी महलमें चलकर आराम कीजिए। नहीं, जिसमें आपकी प्रसन्नता होय सो करिए।

रणधीर—(आनन्दसे प्रेममोहिनीका हात पकड़कर) मैं तुम्हारी प्रसन्नता करनेके लिए मनसे प्रसन्न हूं। भला लक्ष्मीको कोई चाहे तो मिले वा न मिले पर लक्ष्मी जिससे मिलना चाहे उसे क्यों न मिले।

जाय (दोनों गए)

इति चतुर्थ गर्भाङ्क।

——*——

अथ पञ्चम गर्भाङ्क ।

स्थान प्रेममोहिनीका महल सजा हुआ है ।

(रणधीर मखमली कोंचपर और प्रेममोहिनी दूसरी कुर्सीपर बैठी है)

प्रेममोहिनी—(मुस्कराती हुई, लाजसे नीची आंख करके) प्यारे प्राणनाथ ! मुझको अपने प्रिय मित्रके नाम एक प्रेम पत्रिका लिखानी है । आपको अवकाश हो तो कृपा करके लिख दीजिए । आप सा चतुर लिखने वाला मुझको कहां मिलेगा ।

रणधीर—(अचरजसे मनमें) इसने ये कैसी आश्चर्यकी बात कही ! मैं इसकी मीठी बातोंमें आकर ठगा तो नहीं गया ? घड़ी भर पहले ये मेरे वियोगसे शरीर छोड़ती थी । अव ये मुझसे अपने मित्रके नाम चिट्ठी लिखाती है ? ईश्वर जाने इसकी बातोंमें क्या क्या भेद होगा । (प्रकट) अच्छा तुम अपना प्रयोजन बता दो ।

प्रेममोहिनी—प्रेम, स्वाभाविक प्रेम, सच्चा प्रेम, अचल प्रेम, और कुछ नहीं ।

रणधीर—हमको तुम्हारी तरह प्रेम जताना नहीं आता, पर तुम्हारे लिए पुस्तकोंके बलसे कुछ लिखते हैं ।

(प्रेममोहिनीने दवात, कलम, कागज ला दिया ।)

रणधीर—(लिखकर) सुनो———

"प्रेम जलकी वर्षासे प्यासे पपहिएकी प्यास हरनेवाले जलधर, प्रेमप्रफूल्लित पुष्पोंकी सुगन्धिसे संसारको सुगंधित करनेवाले तरुवर, प्रेम भूमिमें वियोगकी वायु झेलकर अचल रहनेवाले भूधर, प्रेम पियूषके सिंचनेसे मुरझाई लताको हरे करनेवाले हिमकर ! आपका मुखचन्द्र निहारनेको मेरे नयन चकोरोंको बान पड़ गई है, इस कारण पलभरके वियोगसे ये व्याकुल हो जाते हैं । आपको ऐसा चुम्बक कहां मिला जिसके बलसे आप

दूर वैठकर मेरा मन खैंचते हो ? कोई प्राणी बन्धनमें रहनेसे प्रसन्न नहीं होता पर मैं आपके प्रीति जालमें प्रसन्न हूं। आपने ये विद्या कहां सीखी? जो हमको सिखा दो तो हम भी आपके ऊपर अजमावें। संसारके विषवृक्षमें एक प्रीति ही अमृत फल है। संसार सागरके पैरने वालोंमें थके हुओंको एक प्रीति ही सहारा देनेवाली नवका हैं। संसारकी पुष्प वाटिकामें येही फूल सज्जनोंके सुगंध लेने लायक है। वहुत क्या लिखें, विचारकर देखो तो संसारके सव कामोंका येही मूल कारण ठैरता है।"

प्रेममोहिनी—आपने मेरे कहनेसे इतना श्रम किया इस लिए मैं आपका वहुत उपकार मानती हूं।

रणधीर—मैं तुम्हारे मित्रको नहीं जानता इस कारण ये चिट्ठी अच्छी तरह नहीं लिखी गई।

प्रेममोहिनी—आप ऐसी वात मत कहो? आपसे मेरा कौनसी वातका अन्तर है। आपने ये चिट्ठी वहुत अच्छी लिखी। अव मेरे कहनेसे आप ही इसको अपने पास रखो।

रणधीर—क्यों! क्या ये तुमको अच्छी नहीं लगी?

प्रेममोहिनी—अच्छी लगी, जव तो आपको देती हूं!

रणधीर—ये तुम्हारी है।

प्रेममोहिनी—ना ना आपकी है। मेरे कहनेसे आपने लिखी इस वास्ते आपका वड़ा उपकार हुआ पर कुछ और भी प्रेम भावसे लिखी गई होती तो अच्छा था।

रणधीर—कहो तो दूसरी लिख दूं।

प्रेममोहिनी—अच्छा, जव आपकी इच्छानुसार लिख जाय तो आप मेरी तरफसे एकवार पढ़कर अपने पास रखना, मेरे ऊपर आपका वड़ा उपकार होगा।

रणधीर--(हंसकर) मैंने अब तुम्हारा भाव समझा, तुम मेरे हाथसे मेरे ही ऊपर तीर छुड़ाया चाहती हो ! ! !

(प्रेममोहिनीने हंसकर सिर झुका लिया)

रणधीर—अच्छा, हंसी चोहलकी बातें तो हो चुकीं । अब कुछ मेरे मनको धीर्य देनेका भी तो उपाय करो ।

(प्रेममोहिनीने फूलोंका गजरा उसके गलेमें पहरा दिया)

रणधीर—ऐसे घायल मनपर कामदेवके बाणोंकी वर्षा करनी तुमको मुनासिब नहीं थी । अब ये चन्द्रमाके अमृत बरसाए बिना कैसे अच्छा होगा ।

प्रेममोहिनी—क्या चन्द्रमाके अमृत बरसानेका भी कोई उपाय है ?

रणधीर—(हंसकर) जो चन्द्रमा ही अपने मुखसे ये बात पूछे तो मैं क्या जवाब दूं !

(प्रेममोहिनी लजाकर कुछ नहीं बोली)

रणधीर—बादलसे बिजलीको अलग होते कभी नहीं देखा फिर तुम अलग बैठ कर ये नई रीति क्यों करती हो !

प्रेममोहिनी—देखो, दीन चकोरी तो चन्द्रमाके दर्शनमात्रसे प्रसन्न हो जाती है ।

रणधीर—हृदयको तपानेके लिए लालच बुरी आग है ।

प्रेममोहिनी—पर सोना आगपर रखनेसे नहीं छीजता ।

रणधीर—हां, नहीं छीजता, परन्तु सुहागेसे मिलकर पिघल जाता है ।

प्रेममोहिनी—(लजाकर) आप बड़े रसिक हैं, मैं आपको जवाब नहीं दे सकती ।

रणधीर—तो अब हम जीतकी लूट करें ।

(प्रेममोहिनीका हाथ पकड़कर अपने पास बैठा लिया ।)

प्रेममोहिनी—हे सज्जन ! मेरा हाथ छोड़ दो, मुझको इसमें बड़ी लाज आती है !

रणधीर—(हंसकर) इसमें लाजकी क्या बात है। मेरे जान तो ये हाथ ऐसा नहीं मिला जो जन्मभर छुट जाय।

प्रेममोहिनी—मुझसे आपकी इस कृपाका क्या बदला दिया जायगा ?

रणधीर—इसके बदले में तुमसे केवल प्रीति चाहता हूं, परन्तु ये बड़े अचरजकी बात है कि मैंने संजीवनी औषधका नाम अबतक नहीं जाना।

प्रेममोहिनी—हे प्राणनाथ ! मेरा नाम प्रेममोहिनी है और मैं सूरतके महाराजकी कन्या हूं।

रणधीर—तब तो तुमने मेरे हृदयको समझकर घायल किया। पानी ठण्डा हो चाहे गरम हो, आग बुझानेके लिये एकसा है।

प्रेममोहिनी—(आश्चर्यसे) आपने कैसा वचन कहा ?

रणधीर—मैं सच कहता हूं। देखो, मोर और सांपका वैर है, परन्तु मोरपङ्खका निकला हुआ तांबा भी सांपके विष उतारनेमें काम आता है।

प्रेममोहिनी—(घबराकर) स्वामी आप कौन हैं ?

रणधीर—प्यारी मैं पाटनके महाराजका पुत्र रणधीर हूं।

प्रेममोहिनी—(आंसू भरकर) आप मेरे मनसे तो अलभ्य रत्न हैं। संसारमें दुर्लभ वस्तुकी चाह विशेष होती है सो मेरे लिए आपसे अधिक और क्या दुर्लभ होगा ? हाय ! मेरे भागमें क्या ये ही लिखा है कि मैं रत्न उठानेको हाथ डालूं तो वो मेरा हाथ लगते ही अङ्गार हो जाय।

रणधीर—ना प्यारी, तुम ऐसा वचन मत कहो। देखो, जहां तुम्हारे नयनोंकी झलक जाकर पड़ती है तहां कमलपत्रके आकार फूल बन जाते हैं।

प्रेममोहिनी—बस प्राणनाथ, मेरी भी यही इच्छा है। मुझको विश्वास है कि ऐसे सज्जन हाथ पकड़े पीछे अधर धारमें नहीं छोड़ते।

धारत विषहर कण्ठमें, कमठ पीठ भू भार।
उदधि सहत पावक प्रबल, अंगीकृत चितधार ॥१॥
कुटिल कलंकी मित्र रिपु, निशिकर निज शिर धारि।
अंगीकृत प्रतिपाल विध, प्रगट करत त्रिपुरारि ॥२॥

रणधीर—विश्वास रखो, मैं जैसे किसीकी प्रेम-परीक्षा लिए विना उसको नहीं अपनाता तैसे ही अपनाए पीछे उसकी तरफका अपराध निश्चै हुए विना उसको परित्याग भी नहीं करता। जिसने प्रीति करके छोड़ दी उसे प्रीतिका रस नहीं मिलेगा।

रुकै न काहू जतनतें, जाहि प्रीतिकी बान।
भौंर न छोड़े केतकी, तीखे कण्टक जान ॥१॥

प्रेममोहिनी—हे प्रीतम! अपने चातककी भी यही दशा समझो, वो सब नदी नालोंकी आस छोड़कर केवल स्वाति बूंदके भरोसे प्राण रखता है।

रणधीर—(आकाशकी तरफ देखकर) हे प्रिये! देखो सूर्योदयका समय हो गया, दीपककी जोत मन्द पड़ गई, हारके मोती शीतल हो गए, पक्षी चहचहाने लगे और कमलके चिकने चिकने पत्तोंसे ओसकी बूंद मोतियोंकी लड़ीके समान ढलकने लगी। अब तुम आज्ञा दो तो मैं भी जाकर स्नान करूं।

प्रेममोहिनी—ना प्राणप्यारे, अभी सूर्योदयका समय नहीं हुआ। आपके तेजसे दीपककी जोत मन्द पड़ गई और पुष्पोंकी शीतलतासे मोती ठण्डे हो गए। पक्षी नहीं चहचहाते। रात्रिके कारण मीठे मीठे सुरोंसे कोयल बोलती है, कमलके पत्तोंपर ओसकी बूंद नहीं ढलकती, मेरे कपोलोंपर आंसू बह आए हैं।

रणधीर—देखो पद्मिनी, ये सूर्य्य अपनी किरणोंसे बादलोंको रङ्ग रङ्गके बनाता है और कमलके खिलनेसे भौंरे उड़ उड़कर अपनी भौंरियोंके पास जाते हैं। देखो, भैरवके मीठे मीठे सुर कहीं दूरसे आकर कानमें पड़ते हैं और सप्तऋषि मानो स्नान सन्ध्या करनेके लिए आकाश मार्गसे मानसरोवरके किनारेपर उतरते हैं, धानके हरे खेतकी तरह तोतोंका झुण्ड उड़ा जाता है।

प्रेममोहिनी—तो क्या सत्य ही मेरी सौत बनकर पूर्व्व दिशासे सूर्यकी किरणें निकल आईं। हा दैव! अब यह पहाड़सा दिन कैसे कटेगा। प्यारे रणधीर! मैं ऊपरसे हरीभरी हूं पर मेहदीकी लालीके समान आपका रूप मेरे रोम रोममें समा गया है। हा-प्राणनाथ! प्राण बिना ये शरीर कैसे रहेगा।

रणधीर—प्यारी! ऐसा वचन मत कहो। मेरे मनकी वेलमें तुम्हारी प्रीतिका पैवन्द ऐसा नहीं लगा जो कभी अलग हो जाय।

प्रेममोहिनी—भला, जिन नयनोंको आपकी अलबेली छवि निहारे बिन कल नहीं पड़ती और जो नयन अपनी टकटकीके बीचमें पलक पड़नेसे दुःखी होते हैं उन नयनोंसे आपके पीछे किसकी ओर दृष्टि उठाकर देखूंगी और ये दुखिया रोरोकर कैसे दिन पूरा करेगी।

पहलै अपनाय सुजन सनेह सों क्यों तू नेहको तोरिये जू।
निरधार दै धार मझार दई गहि बांहन नाहन बोरिए जू॥
घन आनन्द आपने चातकको गुन बांध ले मान न छोरिए जू।
रस प्यास जिवाय बढ़ाय कै आस विसासमैं क्यों विष घोरिये जू॥१॥

रणधीर—ऐसे वचनोंसे इस समय कलेजा फटता है, इस कारण ऐसे मर्मवेधी बचन मत कहो। सूर्य अपनी लाज लूटे। ..पहले मुझको प्रीतिपूर्वक मिलकर

जाने दो । (हाथ छोड़नेकी इच्छा करके) ये कैसा अचरज है कि हाथ अलग नहीं होता ! क्या तुम्हारी विजलीकीसी देहमें विजलीकीसी आकर्षणशक्ति है ?

प्रेममोहिनी—जब आपने बादलसे विजलीको कभी अलग होते नहीं देखा तो अब आप ये नई रीति क्यों चलाते हो ।

रणधीर—(हाथ छोड़कर खड़े होते हुए नेत्रोंमें जल भरकर) मैं क्या करूं, दैवको यही रुचता है । जैसे जलमें काई तैसे संयोगमें वियोग उसने बना दिया है ।

प्रेममोहिनी—

कर छटकाए जात हो, मोहि निबल जिय जान ।
पै हियरेसै जाहु जब, तब जानों बलवान ॥१॥

रणधीर—ना प्यारी, मैं ऐसा बलवान नहीं हूं । मैं तो आप ही अपना मन तुम्हारे पास छोड़ चला हूं । (जाती बार फिर फिरकर देखने लगा ।)

प्रेममोहिनी—(पुकारकर सजल नयनसे) प्राणनाथ ! ठैरो, क्षण एक ठैरो, मुझको अपनी मोहिनी मूर्ति मन भरकर एक वार और देखने दो !

रणधीर—(प्रेममोहिनीकी तरफ देखकर) इसी मिस मुझको अपनी जीवन मूलके निरखनेका कुछ समय मिलेगा । (ठैरकर) प्यारी, इससे तो प्रेमकी गांठ और घुलती है, अब मुझे जाने दो । (जाने लगा ।)

प्रेममोहिनी—(पुकारकर) प्राणवल्लभ ! ठैरो, कुछ देर और ठैरो, मुझको एक बात आपसे कहनी है ।

(रणधीर फिरकर खड़ा हुआ)

प्रेममोहिनी—आपने रातके आनेका समय निश्चय कर लिया ।

रणधीर—सो तो पहले ही हो चुका है ।

प्रेममोहिनी—　　(राग विहाग)

मो मन पिय गुन रह्यो भुलाय।
कबहु रैंन रस रङ्ग सुरत करि अङ्ग सुरत बिसराय!
कबहुक पिय वियोग सुध आवत सुध बुध सकल हिराय! ॥
मो मन०
वह सुख सदन मदनकी मूरति नयनन रही समाय।
नयन खोल चहुं ओर निहारत पुन वह छवि न लखाय! ॥
मो मन०
मिलत प्रात चकई प्रीतम सों दारुण विरह विहाय!।
होत प्रात मोकों वियोग पिय ताते हिय अकुलाय॥ मो मन०।
प्रथम समान धाम, धन परिजन सुहृद सखी समुदाय।
पैं विन प्राणनाथ प्रीतम वरमो हिय कछु न सुहाय! ॥
मो मन पिय गुन रह्यो लुभाय ॥ १ ॥

इति पञ्चम गर्भाङ्क।

तृतीयांक समाप्त।

——*——

अथ चतुर्थाङ्क प्रारम्भ ।

प्रथम गर्भाङ्क ।

स्थान राजमार्ग ।

(रिपुदमनकी सेना धीरी चालसे चलती है । नेपथ्यमें बड़ा कोलाहल हो रहा है । रिपुदमन केसरिया वागा पहन, शस्त्र सजा, घोड़ेपर सवार हो पीछेसे अपनी सेनाके पास आता है और सेनाके लोग खड़े होकर उसकी सलामी उतारते हैं ।)

रिपुदमन---मैं माता पितासे प्रणाम कर स्वस्तिवाचनके लिए ठैर गया था, परन्तु आप लोग अबतक रणभूमिमें कैसे नहीं पहुंचे ? देखो, ये रणसमुद्रके तरङ्गोंकी घोर ध्वनि सुनाई देती है और मैं नाव वनकर इस (समुद्र) से प्यारे रणधीरके पार उतारनेका प्रण कर चुका हूं, फिर क्या अब देर करनेका समय है ?

(नेपथ्यमें फिर हल्ला हुआ और लड़ाईके वाजे सुनाई दिए ।)

रिपुदमन—जैसे वादलके गर्जनेसे सिंहको मद चढ़ता है तैसे लड़ाईके वाजे सुनकर मुझसे यहां नहीं ठैरा जाता । इसमें तो कुछ सन्देह नहीं कि नेकनीयती और परोपकारके विचारसे लड़नेवालोंकी ईश्वरने कभी जय की हो अथवा निराधार मनुष्योंकी तरफ सहारा देनेवालोंको कभी सहारा दिया हो अथवा नीति और धर्मके मार्गमें चलनेवालोंपर कभी दया की हो तो आज हम उसकी दयासे अवश्य जीतेंगे । वो परम दयालु ईश्वर ऐसे अभिमानी, अधर्मी और लालची पुरुषोंके बदले हमपर जरूर दया करेगा वल्कि हमारी तरफसे आप लड़ेगा । हमारा विचार ऐसा तो निर्मल और स्वच्छ है कि उसको चाहे संसारकी रीतिसे, चाहे धर्मकी रीतिसे जांच

कर देखो, उसमें पापका छींटा कहीं नामको नहीं दिखाई देता। भला, अपने वैरी कौन हैं? वेही ना! जो धर्म और नीतिका मार्ग छोड़ पराए मालपर मन दौड़ाते हैं, जो पापी कौरवोंकी भांति वहुत आदमी इकट्ठे होकर अकेले अभिमन्युकी तरह रण-धीरके प्राण हरनेकी चिन्ता कर रहे हैं।

(नेपथ्यमें)—हे देश देशान्तरके राजा महाराजों! आगे वढ़ो, आगे वढ़ो। दो दो पांव चलकर रुक क्यों जाते हो? धीरजसे आगे वढ़कर वैरीके दरवाजेकी सकलको खड़खड़ाओ। जव आपको सोते सिंहकी गुफाका दरवाजा देखनेसे इतना डर होता है तो वो गर्जकर आपके सामने आवेगा तव आपका क्या हाल होगा?

रिपुदमन—अव तो वैरियोंका हाल तुमने अपने कानसे सुन लिया। जीतका आधार सेनाकी गिनतीके वदले मनकी दृढ़तापर अधिक होता है और जितनी थोड़ी सेनासे जीत हो उतना ही जस अधिक फैलता है। देखो, अव तुम सव एक मन होकर ऐसा प्रण करो कि आजके दिन मरना या मारना, आजकी लड़ाईमें हारकर जीते रहनेके वदले वैरीके हाथसे मरना हर तरह अच्छा है। जव इस शरीरके पल भर ठैरनेका भरोसा नहीं तो इसके लिए अपना धर्म क्यों छोड़ना चाहिये? ऐसा समय वारंवार नहीं मिलता। शूरवीर ऐसे समयकी वाट देखते हैं। वीरोंको अपनी वीरता जतानेका ये सवसे अच्छा मौका है। इस समय हाथमें तरवार लेकर ऐसी लड़ाई करो जिससे रुधिरकी नदी वह जाय। जो मन खोलकर लड़ोगे तो जीत कुछ दूर नहीं है। हारोगे तो दास वनकर रहना पड़ेगा।

(नेपथ्यमें)—सव लोग खुशीसे आगे वढ़ो। डरनेका क्या काम है? रण-धीर इकला है और अपने पास इतनी सेना है, जो हम सव इकट्ठे होकर एक एक कङ्कर मारेंगे तो उसको मार लेंगे।

रिपुदमन—हे बकवादी ! बेशर्म ! झूठे ! झूठा बढ़ावा देकर सेनाका मन बढ़ाते तुमको लाज नहीं आती। जिस समय रणधीरकी बिजलीकीसी तलवार तुम्हारी सेनापर पड़ेगी उस समय रणधीरका बल तुमको मालूम होगा। तुम्हारी क्या सामर्थ्य जो रणधीरकी छायापर भी हाथ चला सको। रणधीर मेरा मित्र है और उसने अपने प्राण झोंककर मेरे प्राण बचाये थे, फिर क्या मैं उसके लिए अपने प्राण न दूं ? प्रीतिकी कसौटी विपत्ति है और उपकारियोंको बदला देनेका ये समय आया है। जो लोग प्रयोजनकी प्रीति करते हैं, उनका जीतव धिक्कार है। उनका मुख देखनेसे पाप होता है। जो लोग झूठी प्रीति जताकर दूसरेको ठगते हैं, उनके मा बापको कलङ्क लगता है। मेरा राजपाट जाय तो भले ही जावे, परलोक बिगड़े तो भले ही बिगड़े। मैं स्वर्ग नहीं नर्कवास करनेमें प्रसन्न हूं, परन्तु रणधीरका सङ्ग कभी न छोडूंगा। जबतक मेरा सिर धड़से अलग न होगा, जबतक मेरे शरीरकी एक भी हड्डी साबूत रहेगी मैं रणधीरका बाल बांका न होने दूंगा। जब मैंने मौतका डर छोड़ दिया तो मुझको किसका डर है ? जीत हार तो ईश्वरके हाथ रही पर मैं तलवार हाथमें लेकर आज ऐसी लड़ाई किया चाहता हूं जिससे सब भूमण्डल रुण्डमुण्डमय हो जाय।

(नेपथ्यमें)—हे हे विकट सुभट वीर लोगों ! जो आपने सब तरफकी नाकेबन्दी कर ली है तो अब यहां आकर इस छिपे हुए सांपको बिलसे बाहर निकालनेका उपाय करो। ये दुष्ट अपनी मौतके डरसे छिपकर धरती पकड़ बैठा है।

रिपुदमन—रे रे पापी ! नीच ! झूठे पाखण्डियो ! रणधीरकी निन्दा करनेसे तुम्हारी जीबके टुकड़े नहीं होते ? होंगे जरूर होंगे। तुम्हारी मैंडककीसी टर टर उसके कानतक न पहुंचे इसीमें तुम्हारे लिये अच्छा है, नहीं तो भला भूखे सांपके क्रोधमें भरे पीछे दीन मेंडकोंका कहां पता लगेगा ! रे अधर्मियों, तुम किस नाकसे

अथ द्वितीय अंक।

प्रथम गर्भाङ्क

स्थान सूरतका रजमहल।

[प्रेममोहिनी मालती और चंपाका प्रवेश]

प्रेममोहिनी—सखी ! मैंने तेरे कहनेसे वहां जाकर वृथा परिश्रम उठाया, मैं गई जब तो वहां किसीका नाम भी नहीं था।

चंपा—मैं क्या करूं, तुमने चलनेमें देर कर दी।

मालती—(जल्दीसे आकर) क्यों राजकुमारी, हमारा वचन कैसा सफल हुआ !

प्रेममोहिनी—(लजाकर) क्या ?

मालती—तुम्हारी "इच्छा योहीं रही।"

चंपा—तेरे कहे।

मालती—क्यों ?

चंपा—आजसे कल पास है।

मालती—राजकुमारीके मनसे भी पूछा।

प्रेममोहिनी—(हंसकर) मेरा मन तेरा सा नहीं है।

मालती—हां, मुझको तुम्हारी तरह अपने मनकी बात छिपानी कहां आती है।

प्रेममोहिनी—चल हमसे मत बोल, हमको तेरी हंसी अच्छी नहीं लगती।

मालती—(प्रेममोहिनीको सुनाकर चम्पासे) वसन्तके आते ही अपनी सेना साथ ले, पांचों शस्त्र सजा कर विरही जनोंको जीतनेके लिये काम देव बड़ी सज धजसे केसर बागकी ओर जाने लगा।

चम्पा--(प्रेममोहिनीकी तरफ देखकर) पर मेरे जान तो रति बिना उसकी कोई कामना पूरी न होगी।

प्रेममोहिनी—तुम इन वार्तोको रहने दो, मैंने तो आज एक ऐसा सुपना देखा है जिसके कारण अबतक मेरी छाती धड़क रही है।

मालती--क्या ? क्या ?

प्रेममोहिनी--सूर्यास्तसे पीछे जानेसे मैं एक मनोहर बागमें गई। उसकी शोभा कहां तक वर्णन करूं। उसकी हरियाली देखनेसे आंखोमें तरी आती थी। तरह तरहके पक्षी किल्लोल कर रहे थे। नहरोंमें चारों तरफको जल बहता था। कहीं चद्दर, कहीं फुआर।

मलती--ऐसी शोभा तो हमने बहुत-बार देखी है, आगे क्या हुआ ?

प्रेममोहिनी--(मनमें) ये नहीं जानती दूसरेकी बातके बीचमें बोलनेसे उसको कैसा बुरा लगता है। (प्रकट) मैं ये शोभा देखती हुई आगे बढ़ी तो निर्मल सरोवरके किनारे श्वेत रङ्गका एक बहुत सुन्दर पक्षी दिखाई दिया। उसके पंख चन्द्रमासे अधिक उज्जल थे। उसको देखते ही मेरा जी ललचाया पर वो दो घन्टे तक किसी तरह मेरे हाथ न आया। अन्तमें जब वो इश्कपेचेकी बेल पर जाकर बैठा तब मुझको उसके पकड़नेका समय मिला और वो भी निडर हो मेरे हाथपर आ बैठा।

चम्पा--तुम्हारे कमलसे हाथपर हंस सरीखा वो पक्षी बहुत अच्छा दिखाई देता होगा।

मालती--भला फिर ?

प्रेममोहिनी--फिर मैं उसे लेकर महलमें चली आई पर उसने किसी तरहके चुगे पर चोंच न डाली!

मालती--(हंस कर) वो भी रणधीरकी तरह स्त्रियोंसे लजाता होगा।

प्रेममोहिनी--चल आगे सुन, जव उसने किसी तरहके चुगे पर चोंच न डाली तो मुझको उसका मोतीसा रङ्ग देख, हंसोंके मोती चुगनेकी वात याद आई। मैंने उसके आगे वहुतसे मोतियोंका ढेर लगा दिया और वो उनको चुगने लगा।

चम्पा--मोती चुगनेसे ही उसका रङ्ग मोतीसा चमकता होगा।

मालती--सखी! इनके कोमल हाथसे भोजन करनेको किसका जी न ललचेगा।

प्रेममोहिनी--अव उसके ऊपर मेरी प्रीति वढ़ने लगी। उसको पलभर न देखती तो मेरा जी व्याकुल हो जाता।

चम्पा--आगे?

प्रेममोहिनी--एक दिन मैं उसको सीस महलमें छोड़ कर स्नान करने गई थी पीछेसे किसी दुष्टने उसकी संकल खोल दी और वो निर्मोही प्रेमका तिनका तोड़ कर उसी समय मानसरोवरको चला गया।

मालती--परदेशीकी प्रीतिका येही तो दुःख है।

प्रेमहिनी--सखी! मैं उसके बियोगमें रोते रोते वेसुध हो गई पर वो फिर मेरे पास न आया; हा, इस दुःखसे मेरी आंख खुल गई तो मुझको ये वात सुपनेकी मालूम हुई परन्तु उस (हंस) का ध्यान मेरे मनसे न हटा।

मालती--राजकुमारी! तुम उसकी याद भूल जाओ। सुपनेकी वात पर इतना मन लगाओगी तो काम कैसे चलेगा।

प्रेममोहिनी--सखी! किसी वातकी याद भूलना क्या अपने हाथ है? जैसे सच्ची प्रीति अलग रहनेसे वढ़ती है इसी तरह जिस वातको मनुष्य भूला चाहता है वो अधिक याद आती है और तुमने सुपनेकी वात जताकर मन समझानेके लिये कहा सो संसार भी तो एक स्वप्न है इसमें स्वप्नसे अधिक तुमको क्या दिखाई देता है।

मालती--सखी ! तुम्हारी विद्याके आगे मेरी बुद्धि नहीं चलती पर तुम्हारा मन बहलानेके लिये मैंने ये बात कही थी।

चम्पा--चलो राजकुमारी सांझ हो गई, आपके पिता महलमें पधारे होंगे।

प्रेममोहिनी--अच्छा सखी चलती हूं। (मनमें) देखें इस सुपनेका क्या फल होता है। (सब गई)

इति प्रथम गर्भाङ्क।

——*——

अथ द्वितीय गर्भाङ्क ।

स्थान केसरबाग ।

(बीचमें एक सरोवर है)

{ उसके किनारे रणधीर, रिपुदमन, सोमदत्त, नाथूराम, सुखवासीलाल कुर्सियोंपर बैठे हैं, जीवन रणधीरसिंहकी कुर्सीके पीछे खड़ा है। }

रणधीर—देखो, वृक्षोंमें नई नई कोंपल आने लगीं। इनके देखने मात्रसे वसन्तका आरम्भ जाना जाता है।

रिपुदमन—जैसे इन वृक्षोंके फूलनेसे वसन्त ऋतु जानी जाती है, वैसे ही मनुष्यकी बुद्धिसे उसका होनहार भी मालूम हो जाता है।

सुखवासीलाल—बेशक, अबसे बारिशके आसार पाए जाते हैं, और गुलके बाद समर आता है।

रणधीर—देखो, इस सरोवरके निर्मल जलमें रङ्ग रङ्गके कमलोंकी झांई कैसी सुन्दर दिखाई देती है!

चौबेजी—(जल्दी जल्दी आकर सोमदत्तसे) आज हमैं कौनसो चन्द्रमा है?

रणधीर—क्यों, क्या हुआ?

चौबेजी—(बैठकर) भयोका, मेरो माथो! मैंने पहले बहुतसे पेड़नसों छत्ता तोर तोरके सहत खायो हो, वाही लालचसे आजहू एक पेड़पै चढ़ गयो पर न जानैं

वो कैसो नसा उतार सहत हो, जाइ मोमैं डारत ही मो चिपचिपावे लगो और जी मिचराइके उल्टी आइ गई। (१)

रणधीर—हमने आती वार रास्तेमें एक-वृक्षपर गोंद वहते देखा था, कहीं तुम उसको तो शहत नहीं समझे हो ?

चौवेजी—ठीक है, गोंदई होइगो।

रणधीर—तो तुमने विचारकर हाथ क्यों नहीं डाला ? रूप मिलनेसे सव चीज एकसी नहीं होती। देखो, पन्ना और हरे कांचका रूप एकसा है पर उनके मोलमें वड़ा अन्तर है।

रिपुदमन—(चौवेजीसे) आपने रास्तेमें अपनी पोटली कंधेपर क्यों डाल रखी थी ?

चौवेजी—टट्टूआपे मेरे वैठे पीछे पुटरिआको वोझ कैसे धरतो ?

सोमदत्त—महाराज ! इनकी जन्मपत्रिकामें ही ऐसा जोग पड़ा है।

रणधीर—मुझको ज्योतिषमें फलादेशके वदले गणितपर अधिक विश्वास है।

सोमदत्त—क्यों ?

रणधीर—फलादेशकी विधि पूरी नहीं मिलती।

सोमदत्त—ये वतानेवालेका दोप है।

रिपुदमन—वतानेवाले क्या करें ? इस देशमें अच्छे गुण छिपानेकी ऐसी चाल है कि गुरु मरते मरते मर जायं पर अपनी निज-विद्या अपने शिष्योंतकको न सिखावें। इसका मूल स्वार्थपरता है, इसीसे यहांकी विद्या नष्ट हो गई।

---

(१) हुआ क्या मेरा सिर ! मैंने पहले वहुतसे वृक्षोंसे छत्ते तोड़ तोडकर शहत खाया था। इसी लालचसे आज भी एक वृक्षपर चढ़ गया परन्तु न जाने वो कैसा नशेउतार शहत था जिसको मुंहमें डालते ही मुंह चिपचिपाने लगा और जी मिचलकर उलटी आ गई।

सोमदत्त—आपको ज्योतिषमें कुछ सन्देह हो तो मुझसे प्रश्न करिये ।

रणधीर—आज यहां क्या होगा ?

सोमदत्त—(विचारकर मनमें) इस समयके देशकालसे तो इस प्रश्नका कुछ मेल नहीं मिलता परन्तु शास्त्रके अनुसार कहनेमें हमको क्या दोष है? (प्रकट) महाराज ! लग्नकी सधिसे इस समय कुछ निश्चय तो नहीं हुआ पर इस प्रश्नमें शुक्र पञ्चमेश होकर लग्नम लग्नेशसे मिलता है इस कारण इसके अनुसार तो यहां आपका किसी वेश्यासे मिलाप होना चाहिये ।

सुखवासीलाल—(मनमें) वाह ! नजूम भी मुफातिउलकजा है। (१)

रणधीर—इन वार्तोंने तो फलादेशसे मेरा विश्वास उठा दिया ।

चौबेजी—महाराज ! इनकी विधि तो मिल गई !

दोहा। गणिका गणक समान हैं, निज पंचाङ्ग दिखाय।
जन मन मोहन धन हरण, विधिने दिये बनाय ॥

फिर आप वातें नांहि इनते मिला लिए। (सोमदत्तकी तरफ देखकर) आपकी विधको तो भोरे वनियानको भलो भरोसो होइ है। (१)

सोमदत्त—अजी, उनकी कुछ मत कहो, वे अपने मतलबमें बड़े पक्के होते हैं। हमारे मामाके एक वड़े साहूकारकी जीविका थी पर उससे उनको जन्म भरमें एक कपर्दिका भी नहीं मिली। और कहांतक कहें, एक वार सब घरकोंने महाभारतकी कथा सुनी थी परन्तु भेंट पूजाका क्या काम ! जब कथा पूरी हुई तो हमारे सामने

---

(१) वाह ! ज्योतिष भी होनहारकी ताली है

(२) महाराज ! इनकी विधि तो मिल गई। (दोहा) फिर आप उसमें नहीं इनसे मिला लिए। (सोमदत्तकी तरफ देखकर) आपकी विधिका तो भोले वनियोंको अच्छा भरोसा होता है।

उदास होकर सेठजीसे पूछा "आप इसका कुछ अर्थ समझे" सेठजीने कहा "हां, मरते मर जाना पर एक कौड़ी न देनी।"

रिपुदमन——कञ्चनके स्थानमें मूसा विल ही ढूंढ़ता है।

नाथूराम——ना, अन्नदाता! आपनैं इणतरां फुर्माणो जोग नहीं। शगरी जातामैं शगरी तरांका आदमी हुवै छे, इयांई म्हांरी जातमैं भी कोई कुपातर निकल गयो तो कांई एकेरे कारण शगरो देश खोटो हो जासी। (१)

सुखवासीलाल——तुम्हारे फंदेसे खुदा वचावे।

नाथूराम——म्हांरो फंदो कांई छै? (२)

सुखवासीलाल——कर्जदार, जो लोग इसमें फंस जाते हैं उनका दिल ही जानता होगा।

नाथूराम——म्हे कांई कोईनैं देवा जावां छां, इण फन्दारा पासा तो घणासा खोटा चाला अथवा खोठी वड़ाईरा लोभरो अण्हूंतो खर्च छै। (३)

रणधीर——तुम लोग और बातोंमें चाहे जैसे हो, परन्तु विना विद्या नए रोजगारसे दौलत पैदा करनेकी हिम्मत तुम्हारे साथमें किसीको नहीं होती। इस कारण पुराने धन्धेमें वहुत लोगोंको एक रीति होनेसे तुम लोगोंका नफा तो प्रतिदिन निःसन्देह घटता जाता है।

---

(१) ना अन्नदाता, आपको इस तरह फर्माना मुनासिव नहीं। सव जातोंमें सव तरहके आदमी होते हैं; इसी तरह हमारी जातमें भी कोई कुपात्र निकल गया तो क्या एकके कारण सव देश वुरा हो जायगा।

(२) हमारा फंदा क्या है।

(३) हम क्या किसीको देने जाते हैं। इस फंदेके फांसे तो वहुधा दुर्व्यसन अथवा झूठी वड़ाईके लालचकी फिजूलखर्ची है।

[सरोजनी वेश्याका प्रवेश]

रणधीर---(मनमें) ये तो पण्डितजीके प्रश्न मिलनेको आ पहुंची। इस समय मुझको अपने विचारपर दृढ़ रहना चाहिये।

नाथूराम---(मनमें) कांई फूटरो रूप छै! (१)

सुखवासीलाल---(मनमें) इसको देखते ही मेरे जिस्ममें ताजी जान आ गई। ओहो! आज इसने क्या नफीज पोशाक पहनी है। इसकी पुरपेंच जुल्फें दिलको बेताब किए डालती हैं, मगर ऐसा न हो। बेहोशीकी हालतमें कहीं मेरी जुबानसे कोई राज्की (भेद) बात न निकल जाय।

सरोजनी---(मनमें) मैं दूसरेके कहनेसे यहां आई हूं। परन्तु इस नवद जानको देखकर तो मेरा मन आपसे आप इसके आधीन हुआ जाता है। (प्रकटमें रणधीरसे लज्जित होकर) राजकुमार---

रणधीर---सुन्दरी! तुमको कहना हो सो डर छोड़कर कह दो, परन्तु मेरा स्वभाव तो तुमने सुना होगा।

सरोजनी---मैं कुछ धन दौलत नहीं चाहती। मैं तो बहुत दिनसे आ-प-प-। (आंख नीची कर ली।)

रणधीर---(मनमें) ये इन लोगोंके फुसलानेका ढङ्ग है। (प्रकट) नहीं ऐसी बातोंकी चर्चा यहां मत करो। मैं अपना स्वभाव तुमको पहले जता चुका हूं।

सरोजनी---(मनमें) अब दबाकर कहनेसे जिद बढ़ेगी। (प्रकट-मैं पहले बचनको पूरा करती हुई) मैं बहुत दिनसे आपको अपना गुण दिखाया चाहती हूं।

सुखवासीलाल---(मनमें) नए पंछीको जालमें फंसानेके वास्ते इसने खूब ल्हासा लगाया।

---

(१) कैसा सुन्दर रूप है।

रणधीर—(मनमें)न मेरी इन वातोंमें रुचि, न ये काम मेरे करने लायक, मैं अवतक एकान्तके सहारे वचा हूं। नहीं तो कुसङ्गसे वड़े वड़े तपस्वियोंका तप भङ्ग हो गया तो मेरी क्या गिनती है। वेश्याकी प्रीति धनके लालचसे वताते हैं इस वास्ते ये कुछ ले तो कुछ देकर पीछा छुड़ाऊं। (प्रकट) वस, सुन्दरी क्षमा करो। काजलकी कोटरीमें गए पीछे किसीके स्याही लगे विना नहीं रहती। हां, तुमको कुछ धनका लालच हो तो कह दो।

सरोजनी—मैं तो रूपरसकी भूखी हूं।

रणधीर—सो यहां न मिलेगा।

सरोजनी—हे राम!

सोमदत्त—स्वर्गमें अर्जुनने उर्वसीका निरादर किया तव उर्वसीका भी ये ही हाल होगया था!

सुखवासीलाल—(धीरेसे सुनाकर) ए तेरी शान!

रणधीर—क्या है?

सुखवासीलाल—कुछ नहीं। जिसके दरवाजेसे आजतक कोई नाउम्मेद होकर नहीं गया, उसके दरवाजेसे आज ये वदवख्त मायूस (निरास) होकर जायगी।

रणधीर—कोई जीते जी स्वर्ग जानेका मन करे तो कैसे जाय?

रिपुदमन—(मुसकुरा कर) जैसे विश्वामित्रके वलसे त्रिशंकु गया!

रणधीर—(हंसकर) आपको सव सामर्थ्य है!

रिपुदमन—चतुर जनोंको प्रमाण पाए विना कोई वात मुखसे नहीं निकालनी चाहिये।

रणधीर—(हंसकर) अच्छा, मेरी अंगूठी आपके पास थी सो कहां है?

रिपुदमन—ये रही। (अंगुलीसे अंगूठी उतारती बार रणधीरके बदले अपनी अंगूठी देख, देता रह गया।)

रणधीर—लाइये, लाइये।

रिपुदमन—आप मेरी अंगूठी दिखादोगे तब मैं आपकी अंगूठी दिखाऊंगा।

रणधीर—ऐसे बहानोंसे काम नहीं चलता। देखो आपने जिसको मेरी अंगूठी दी थी उससे मेरे पास आ गई। (अपनी अंगूठी दिखाई)

रिपुदमन—(हंसकर) अच्छा, इससे तो उसके साथ आपकी प्रीति भी पाई जाती है।

रणधीर—निस्सन्देह।

रिपुदमन—तो फिर चिन्ता नहीं। "समानशीलेन सखित्वनस्ति"

सुखवासीलाल—(मनमें) इन लोगोंकी दिल्लगीमें मेरा मतलब फोत हुआ जाता है। (पण्डितजीसे धीरे धीरे) इसमें और तो कुछ नुक्स नहीं, लेकिन ये कम्बख्त खाली जायगी तो तमाम शहरमें बदनामी फैलायगी।

रणधीर—(सुनकर) अच्छा, इसको कुछ दे दो।

सरोजनी—मैं कुछ नहीं चाहती, मेरा एक मुजरा हो जाय।

सुखवासीलाल—(धीरे) जब आपको देना मंजूर है तो इसकी राजीके वास्ते घड़ीभर गाना सुन लीजिये।

रणधीर—ना ना, मैं अपने समयको कभी ऐसे कामोंमें नहीं खोया चाहता। बस, आगसे घीका अलग रहना ही अच्छा है।

सुखवासीलाल—क्या सांपके पास रहनेसे उसकी मणिको ऐब लगता है?

सोमदत्त—कभी नहीं।

सङ्ग दोषते साधु जन, परत न दूषण मांहि ।
विषधर लिपटे रहत तउ, चंदनमैं विष नांहि ॥

चौवेजी—हां, व्यारते कहूं पहार उड़ै हैं। (१)

रणधीर—(मनमें) ये खुशामद मेरे लिये मीठा विष है। इसीके भुलावेमें आकर बहुतसे धनवान नष्ट होते हैं, अपना निज रूप भूल जाते हैं और हितकारियोंके वचन कडुए लगते हैं। मैं, ऐसा रोग अपने पीछे नहीं लगाया चाहता। इससे जुएके नफेकी भांत कभी सुख नहीं मिलता। खोटे लोगोंकी सङ्गतिसे तो एकान्तमें रहना हर भांत अच्छा है। (प्रकट) आज तुम विना पूछे राह क्यों देते हो ?

सुखवासीलाल—(हात जोड़कर) कसूर मांफ, जब हजूर अपने दिलको घड़ी भरके वास्ते कायम नहीं रख सकते तो ता हयात उसके मुसतहकिम रहनेकी क्या उम्मेद ? (२)

रणधीर—जो मैं किसीके कहनेसे अपना विचार बदल डालूं तो तुम्हारा कहना सच्चा हो ।

रिपुदमन—इससे तो आप किसीकी अच्छी वात भी न मानेंगे।

रणधीर—अच्छी वात जरूर मानेंगे, पर किसीके कहने सुननेसे नहीं; हमारी राहमें अच्छी होगी तो मानेंगे।

सरोजनी—(आंखोंमें आंसू भर, दाहना हाथ छाती पर धर) संसारमें मेरे बराबर दुःखिया कौन होगा ! मुझको अपनी मौत भी मांगी नहीं मिलती। न जाने मैं कौनसे पापोंका फल भोगती हूं। देखो ! मैंने पहले तो स्त्रीका चोला पाया, फिर उसमें

(१) कहीं पवनसे पर्वत उडते हैं !

(२) अपराध क्षमा, जब आप अपने मनको घडीभर स्थिर नहीं कर सकते तो जन्मभर उसके दृढ़ रहनेकी क्या आस ।

पतिसेवाका बड़ा धर्म था सो मेरे हाथ न रहा। जिस कामसे मेरी जीविका हुई, इसमें कोई सज्जन मन रंजन मुझको न मिला और दैवयोगसे दशहराके नीलकंठकी भांत एक दिखाई भी दिया तो उसका मिलाप कठिन हो गया। मैंने अपनी लाज छोड़कर अपने मुखसे कहा तो भी उसने कुछ न सुना। हाय! दुःखियाको सब जगह दुःख है!

चौबेजी—(भोले भावसे) नीलकण्ठके लिए इत्ती फिकर मत करो। देखो, मैंने बड़ी कठनाई से एक पिंडुकिया पकरीही सोहू दो तीन दिन रहके आपते आप उड़ गई। अपनको पञ्छी पखेरूते लहनो नांय हैं। (१) (सब हंसने लगे।)

रणधीर—(मनमें) वेश्याकी वातका भरोसा न करना चाहिये पर इसके मनमें कुछ न कुछ दर्द तो पाया जाता है। (प्रकट) ऐसी वातोंमें कुछ सार नहीं। आंसू डालकर धिक्कार सहना, दुर्लभ चीजके लालचसे दुर्लभ देहको जोखोंमें डालना, तीस रात जग कर पलभरका सुख भोगना, जिसमें भी मिलाप हुआ तो थोथा लाभ, न मिलाप हुआ तो थोथी महनत। बुद्धि वेचकर मूर्खता खरीदनी, अथवा मूर्खताके आगे बुद्धिसे पानी भराना, ऐसी प्रीतिका फल है।

सुखवासीलाल—हजूर, इन जरा जरासी वातोंपर इतना माम्मुल करेंगे तो काम क्यों कर चलेगा? (२)

रणधीर—दोष छोटेसे छोटा और गुप्तसे गुप्त वनकर मनमें प्रवेश करता है परन्तु प्रवेश पीछे दृढ़ हो जाता है इस कारण इसको कभी छोटा न गिनना चाहिये।

---

(१) (भोले भावसे) नीलकण्ठके लिए इतना फिकर मत करो। देखो, मैंने बडी कठिनतासे एक गुरसल पकडी थी सो भी दो तीन दिन रहकर आपसे आप उड गई। अपनेको पक्षी, पखेरूओंसे लहना ही नहीं है

(२) प्रभु, इन जरा जरासी वातोंमें इतना विचार करेंगे तो काम कैसे चलेगा।

सोमदत्त--(रणधीरसे) आपके मनमें इतनी अरूचि है, तो क्या घड़ी भरमें आपका मन वदल जायगा ?

रणधीर—जब आप भी ये वात कहने लगे तो मैं लाचार हूं पर और लोग सुनेंगे तो क्या कहेंगे ?

रिपुदमन--किसीके भय वा प्रीतिसे धर्म छोड़ना अच्छा नहीं, क्योंकि वो भय और प्रीति घट जायगी, तव अपने मनको अधर्मसे रोकनेका कुछ हेतु न रहेगा इस कारण अपना धर्म विचार कर अपने मनको अधर्मसे रोकना चाहिये।

सुखवासीलाल—(रिपुदमनसे) ऐसी वातोंका खयाल करें तो दुनियामें पैर रखनेकी जगह न मिले।

रणधीर—चलो, इस वखेड़ेको दूर करो, विवाद करनेसे क्या लाभ ।

सुखवासीलाल—(सरोजनीसे) जल्हदी अपने सफरदाइयोंको वुला। (मनमें) आखिर-कार पिगले, कहिये अव इनकी वो तेजी कहां है !

(सरोजनी नाचकर तालसे गाने लगी)

"यद्यपि हम अवला नृप नंदन, नीच जाति सव भांति ।
पै लग जाय प्रीति उर, जासों हाथ विकाति ॥
अति निर्दई हृदय स्वारथ रत, सव दिन चलैं अनीती ।
पै हिय कपट न राखैं तासों, बांधैं जासों प्रीति ॥
हम तिय नीच मींचकी मूरत, सदा असांचहि भाखैं ।
पै लग प्रीति करैं हम जासों, तिहिं तन मत दे राखैं ॥
पति, पितु, पुत्र, वंधु, परकर जन, रहैं सवनते न्यारी ।
पै कछु वीच न राखैं तासों, वांधैं जासों यारी ॥

हमते नीच न जग नृप नंदन, तुमते ऊंच न कोई ।
पै हिये प्रीति तोल जो देखो, गरू हमारी होई ॥"

नाथूराम—या तो वाट ताखड़ी लार म्हारोई काम खोसवा लागी, आच्छी आडे पालडै तोलस्यां (१)

(दूसरा छन्द)

"जिन, जिन प्रेमिन केर तगत मैं, सुनियत वड़ी वड़ाई ।
तिन, तिन मैं विचार जो देखो, सबमैं एक खुटाई ॥
हिम तन दहे न कहे कवहुं कछु, पुनि तिहिं लख सुख मानैं ।
ऐसी पीर कमलके मनकी, कहो भानु कहा जानैं ॥
तरसत रहत दरस विन पाए, नित ताकत तिन पांहीं ।
अस चकोरकी प्रीति चन्द्रके, नैक चुभी चित नाहीं ॥
घुमडी घटा देख प्रीतमकी, नाचत दादुर मोरा ।
तिनकी ओर तनक नहिं ताके, ताकै ऐसी मेघ कठोरा ॥
पिउ, पिउ करत पपीहा अपनों, प्राण त्याग कर दीन्हों ।
पिउके जीव दया नहिं आई, वर पातक शिर लीन्हों ॥
सर्वस त्याग परी तिहिंके वश, छांड़त नहिं दिन राती ।
ऐसी प्रीति मीनकी देखत, जलकी फटी न छाती ॥
जात पतङ्ग समीप दीपके, जरत परत तिहिं मांहीं ।
ऐसी प्रीति निहार दीप कै, भई दया कछु नाहीं ॥
ऐसी वहुत प्रीति चालनकी, देखी चाल अधीरा ।
एकै प्राण देत तिहिं ऊपर, एक न जानत पीरा ॥"

(१) ये तो वाट तराजू लाकर हमारा ही काम छीनने लगी, अच्छा खडे पल्कसे तोलेंगे।

चौवेजी—(सरोजनीसे) तुम्हारो शरीर सिथलसो दिखाई देहै, सो का तुमारो पाऊं भारी है ?

सरोजनी—(हंसकर) हां बेटा, होगा।

नाथूराम—(सरोजनीसे) थारी जोड़ी कठै छै ? (१)

सरोजनी—(रणधीरकी तरफ देख कर) ये रही, पर आपकी किसके पास है।

(सब हंसने लगे।)

रणधीर—सांझ हो गई, जिसको स्नान ध्यान करना हो, कर आओ। हम इतने रिपुदमन सिंहके साथ बागकी सैर करते हैं। फिर यहांसे भोजन करके मकानको चलेंगे।

(सब उठ खड़े हुए)

इति द्वितीय गर्भाङ्क ।

——*——

(१) (सरोजनीसे) तुम्हारी जोडी कहां है।

अथ तृतीय गर्भाङ्क ।

स्थान केसरबागका एक विभाग ।

(अंगूरकी टट्टियोंके ओझल, एक पुरुष सरोजनीकी गलबांही डाले खड़ा है ।)

[रिपुदमन और रणधीर वहां आते हैं ।]

रणधीर—देखो सांझ होते ही चकवे चकईका वियोग हो गया ।

रिपुदमन—और सूर्य्यके विरहसे कमलनी कुम्हला गई । पक्षी अपने अपने बसेरेको चले । कुमोदिनी वासक सय्याकी तरह चन्द्रमाकी बाट देखने लगी । और—

रणधीर—(चौंककर) देखो तो, इन टट्टियोंके पीछेसे किसी मनुष्यकी आवाज आती है !

रिपुदमन—हां, आती तो है, पर समझमें नहीं आती । चलो पास चलकर सुनें ।

टट्टीकी ओझलवाला पुरुष—(इन्हें देख सरोजनीसे) हैं ! रणधीर और रिपुदमन तो यहां आ पहुंचे । अब मैं यहा ठहरूंगा तो एंढेका चोर बने जाऊंगा । तुम इनके आगे मेरा नाम न लेना । अंधेरेके पर्देसे ये मेरा मुंह नहीं देख सकते । (नेपथ्यकी तरफ दौड़ा)

रणधीर—(उसे जाता देख) ये तो अपने ही साथका कोई आदमी है । इसने अपने यहांकी वर्दी पहन रखी है, इसे जरूर पकड़ना चाहिये ।

रिपुदमन—मैं चला । (उसके पीछे पीछे नेपथ्यमें जाता है ।)

रणधीर—(आगे बढ़कर सरोजनीसे) ये कौन था ?

सरोजनी—मैंने नहीं पहचाना। इसने अभी आकर मुझसे कुछ कहा था पर मैंने उसकी बात पूरी नहीं सुनी। इतनेमें वो किसीकी आवाज सुनकर इधरको दौड़ गया।

सोमदत्त—(आकर इनको बतलाते देख मनमें) ये कौन! रणधीर और सरोजनी! तो क्या हमको दिखानेहीके लिए ब्रह्मचर्य्य था! भला इनकी थोड़ीसी बातें सुन लें, किसी समय कहनेके काम आवेंगी। (वृक्षकी ओटमें बैठ गया।)

रणधीर—क्या तुम इसी (बनावटरूपी) मोमके फूलपर (मेरे मन रूपी) ऐसे चञ्चल भौंरको लुभाया चाहती हो?

सरोजनी—ना! इसके लिए तो मेरा हृदय-कमल हाजिर है।

सोमदत्त—(मनमें) अब हमको किसी तरहका सन्देह नहीं रहा, पर बड़े आदमियोंके दोष देखनेमें सदा प्राणका भय रहता है, इस कारण इस समय यहांसे टल जाना चाहिये। (जानेको तैयार हुआ)

रिपुदमन—(आकर, हास्यपूर्वक रणधीरसे) क्या इसी एकान्त मिलापके लिए आपने मुझको भेजा था? तो मेरी भूल हुई जो मैं जल्दी आया।

रणधीर—हँसीकी बात पीछे करना, पहले उस पुरुषका हाल कहो।

सोमदत्त—(मनमें) इन दोनोंकी एक मट मालूम होती है।

रिपुदमन—मैं गया जब वो बहुत दूर निकल गया था, इस कारण हाथ नहीं आया। पर मैंने बरहेकी थोड़ीसी गोली मट्टी फेंककर उसके अङ्गरखेमें दाग लगा दिया है। इसमें अब वो नहीं छिप सकता।

सोमदत्त—(मनमें) इसमें तो कुछ और ही भेद मालूम होता है, क्या ये मतवाले हाथीकी तरह इस समय जिसको देखेंगे, मार डालेंगे।

रणधीर—(सरोजनीसे) तुम उसका पता बता दो तो सब सन्देह मिट जाय।

सरोजनी—मैंने पहचाना होता तो मैं आपसे कभी नहीं छिपाती।

सोमदत्त—(मनमें) भला इन दोनोंमेंसे किसीने उसको नहीं पहचाना तो सरोजनी कैसे पहचान लेती।

रिपुदमन—(रणधीरसे) ये कहो चाहे न कहो, वो अङ्गरखेके दागसे जरूर पकड़ा जायगा।

रणधीर—तो चलो, उसका पता लगावें। (आगे वढ़े)

सरोजनी—(मनमें) मेरे मनमें बालकपनसे सुख भोगनेकी वड़ी लालसा थी। इसी लालचसे मैंने अनेक पुरुषोंको रिझाया, वहुतसा धन इकट्ठा किया, अनेक तरहसे इन्द्रियोंको सुख दिया पर अवतक मेरे मनकी लालसा पूरी न हुई। मेरे मनको क्षण भर सुख न मिला, मेरे मनका लालच प्रतिदिन वढ़ता रहा। मैं चाहूं तो अव भी वहुत लोगोंको रिझाकर धन इकट्ठा कर सकती हूं पर करनेसे लाभ क्या? इनसे सुख होता तो अवतक क्यों न होता। जो सुख इन चीजोंसे स्वप्नमें दुर्लभ था सो आज रणधीरसिंहके देखनेसे पल भरमें मिल गया, निःसन्देह मिल गया। पर क्यों? रणधीरसिंह भी तो एक मनुष्य है—मनुष्य है परन्तु मैं उसको मनसे चाहती थी, मनका सुख ऊपरकी वातोंसे कभी नहीं होता। (गई)

रणधीर—(चलते चलते) इस समय मेरे मनमें अनेक तरहके संदेह उठते हैं। कहीं चौवेजीको रास्तेमें इसी कारण देर लगी हो, अथवा पंडितजीने जान वूझकर इसके आनेकी विध मिलाई हो, अथवा सुखवासीलालने मुझको जालमें फंसानेके लिए ये चाल चली हो, अथवा इन सवने मिल मिलाकर ये करतूत रचा हो कुछ नहीं जाना जाता। जवतक चोर न मिलेगा, मेरे चित्तकी शान्ति न होगी।

रिपुदमन—जैसे दूधको आगपर रखते ही उफान आता है तैसे मनुष्यका मन ऐसी वात जाननेसे एकवार चञ्चल हो जाता है परन्तु दूधके उफानकी भांत ये चञ्चलता थोड़ी देरकी है। जो लोग इस (चञ्चलता) के वस होकर आपेसे वाहर हो जाते हैं

दूधकी तरह उनका पता नहीं लगता। इस कारण आपसे बुद्धिमानोंको वो चञ्चलता दूर हुए पीछे अपने हानि लाभका विचार करना चाहिये, । आप इस समय इस वातको पी जाओ, सवके आए पीछे अचानक उनके अंगरखेको देखकर निश्चय कर लेंगे।

(दोनों कुर्सियों पर बैठ गए ।)

सोमदत्त---(मनमें) जो मैं उस समय इनको पापी समझ कर चला जाता तो कैसी भूल होती ? मनुष्यको सव काम विचार कर करना चाहिये। (आगे बढ़ कर प्रकट) महाराज अवतक और लोग नहीं आए ?

रणधीर--(उदास भावसे) आते होंगे। (सोमदत्त बैठ गया)

चौवेजी—(झूमते झूमते आकर मनमें) आज तो सरोवरमें भले न्हाए! भांगके जोरसे जासमें सरीर सन्न सन्न कर रह्यो है। चलो लडुआ निधानके पास चलके भोजनकी ठैरावें। का मोए भोजनके लिये कोऊ टेरे है ? अच्छी आयो। (रणधीरके पास जाकर) धरम्मूरत मैं तो आवेई हो। (१)

रणधीर—(अरुचिसे) वैठ जाओ।

चौवेजी—(भोजनकी आज्ञा समझकर) पातर कहां है।

रिपुदमन—(पातरका अर्थ वेश्या समझकर) आपका अवतक जी नहीं भरा ?

चौवेजी—कोरी वातनते जी भरत होइगो ?

रिपुदमन—तो उसका क्या करोगे ?

चौवेजी—जो सव करत हैं। (वैठ गये)

---

(१) झूमते झूमते आकर, (मनमें) आज तो तालावमें अच्छे नहाए। भङ्गके जोरसे इस समय शरीरमें सन्नाटा हो रहा है। चलो लडुआनिधानके पास चलकर भोजनकी ठैरायें। क्या मुझको भोजनके वास्ते कोई पुकारता है ? अच्छा, आया। (रणधीरके पास जाकर) धर्ममूर्ति मैं आता ही तो था।

रणधीर (मनमें) इन बातोंसे बढ़कर और क्या प्रमाण होगा।

(सुखवासीलाल और नाथूरामका प्रवेश)

रणधीर—(सन्देह करके) तुम इतनी देरसे कहां थे?

सुखवासीलाल—सेठजीने चौबेजीकी भंग पी ली इस सबबसे कई बार कै चुके हैं और अबतक बेहोशी बदस्तूर बन रही है।

रणधीर—(मनमें) इन लोगोंने मुझको भुलावा देनेके वास्ते ही ये भूलभुलैयां बनाई हो तो क्या आश्चर्य!

रिपुदमन—(मनमें) नशेसे लोग इतना दुख पाते हैं, अचेत हो जाते हैं, पर न जानें इसका पीछा क्यों नहीं छोड़ते!

नाथूराम—(रोती सूरत बनाकर) बापजी हूं तो मारियो गयो कुतारी मौत मारियों गयो। म्हारी सगरी उघराणी डूब जासी, नौकर चाकरो नठै माल देसा धीमारी पेढ़ी गैणा गाठारो, लेण देण, माल तालरो मन्दो, आडतियांरो काम काज, कुण भुगतासी? अजी और तो हुई न हुई, पिण म्हारा परणै कुण आवसी, टाबरांने कुण परणासी, अंवर मैं थांरा नगरो बंदोबस्त कर दियो हो तो तो इण बखत काम आतो, पिण (रणधीरकी तरफ देखकर) अब तो म्हारी सगरी लाज आपने है। (१)

सोमदत्त—गवैया गिरा तो भी ताल सुरसे।

सुखवासीलाल—गरीबपरवर! चौवेजीनें तालावमें आज बड़े बड़े तमाशे किए।

चौवेजी—और अपनी न कहोगे जो पानीमें पांव धरत ही कमलकी नाळते डर कर निकर भागे!

रणधीर—(रूखे होकर) क्यों थोथी बातें कहते हो।

सुखवासीलाल—(मनमें) जिस वक्त आदमीका दिल उछांट होता है उस वक्त उसको किसीकी बात अच्छी नहीं लगती।

चौवेजी—अच्छी, मैं एक बात और कहलऊं, फिर वस्स। (विचारकर) बखत पै रांड याद ही नांय आवे। (सुखवासीलालकी तरफ देखकर) क्योंजी मैं का कह्यो चाहै हो? जाईवे द्यौ, नांय याद आवै तो न सही पर अव भोजनमैं कित्ती देर है? (१)

रणधीर—जरा ठैरो!

चौवेजी—भोजनके लिए तो आप कहोगे जित्ती देर ठैरो रहोंगो पर वामैंते थोरोसो सरोजनीको जरूर दीजो नहिं तो वाकी नजर लग जायगी। (२)

रणधीर—(तेज होकर) तुमसे नाहीं कर दी तो भी तुम अपनी दन्तकथा नहीं छोड़ते।

---

(१) अच्छा, मैं एक बात और कह लूं फिर वस। (विचारकर) समयपर रांड याद ही नहीं आती। (सुखवासीलालकी तरफ देखकर) क्यों जी मैं क्याकहा चाहता था? जाने दो नहीं याद आती तो न सही, पर अव भोजनेमें कितनी देर है?

(२) भोजनके वास्ते तो आप कहोगे जितनी देर ठहरा रहूंगा परन्तु उसमें थोड़ासा सरोजनीको जरूर देना, नहीं तो उसकी नजर लग जायगी।

चौबेजी--अच्छी अच्छी, अव कछू न बोलोंगो पर यहांके मालिनको तो कछू न कछू जरूर दियो चाहिये।

रणधीर—(उसकी वात अनसुनी करके) अच्छा, सव लोग एक एक करके हमारे आगेसे निकल जाओ।

चोवेजी—(आश्चर्य्येसे) जाते का होइगो ?

रणधीर—सो अपनी आंखसे देख लेना।

(सुखवासीलाल, नाथूराम, सोमदत्त और चौवेजी आगे पीछे होकर चलते हैं)

रिपुदमन--(चौवेजीकी पीठपर मट्टीका दाग देखकर) आहा! इस काममें भी आपने वहादुरी की।

चौवेजी--हां तो वहादर विना वहादरी कौन करै ?

रणधीर—परन्तु अवतक तुम पुष्पमें कीड़ेकी भांत भले छिपे रहे।

चौवेजी—भला समन्दरकी गहराईकों ऊपरके फिरन हारे खेवट कहा जानें। (१)

रणधीर—आज तो आपका सरोजनीसे वड़ा गहरा मिलाप हुआ!

चोवेजी—चमक पत्थरते लोह्यो आप मिल जात है। (२)

रिपुदमन--तुम्हारे अङ्गरखेमें मिट्टीका दाग कैसे लगा ?

चोवेजी--(हंसकर) काहू छोरा छापरेने लगाय दियो होइगो, मैं ऐसी वातनकों का गिनों हों!

सुखवासीलाल—(मनमें) ऐव करनेको भी हुनर चाहिये।

रणधीर—(रिपुदमनसे) देखो, पाप सिरपर चढ़कर अपने आप वोल दिया। (चोवेजीसे) वस, अव आप यहांसे अपने मकानको पधारिये।

---

(१) भला समुद्रकी गम्भीरताको ऊपरके फिरनेवाले मल्लाह क्या जाने।

(२) चुम्बक पत्थरसे लोहा आप मिल जाता है।

चोबेजी—तो का विनाही भोजन करे चलो जाऊं ?

रिपुदमन—(रणधीरसे) ब्राह्मणका ऐसा निरादर मत करो ।

रणधीर—(चोबेजीसे) अच्छा, भोजन करके चले जाना ।

चोबेजी—फिर तो सवी चलेंगे ।

इति तृतीय गर्भाङ्क ।

———*———
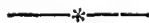
अथ चतुर्थ गर्भाङ्क ।

स्थान रणधीरका महल ।

(बीचमें गोल मेजपर लम्प जलता है, रणधीर और रिपुदमन कुर्सियोंपर बैठे हैं ।)

रणधीर—इस समय मेरा मन बड़ा उदास हो रहा है। मेरे जान अच्छे आदमियोंको कभी कोई काम छिपकर न करना चाहिये । जिस काममें कुछ पाप, डर, दगा, लिहाज वा संदेह रहता है उसको आदमी छिपकर किया चाहते हैं परन्तु जिन लोगोंका मन साफ है, जिनकी नियत अच्छी है, जो किसीसे बनावटकी बात नहीं किया चाहते, जो परिणाम सोचकर काम करनेवाले हैं, उनको कभी छिपकर कोई काम करनेकी जरूरत नहीं पड़ती । संसारमें ऐसे आदमी बहुत कम हैं इस कारण उनकी बातें प्रकटमें अनोखी सी लगती है परन्तु उनका मन छिपकर काम करनेवालोंकी अपेक्षा सदा प्रसन्न रहता है । उनको अपनें वाजबी हक प्राप्त करनेका पूरा अवकाश मिलता है। किसी मनुष्यको अपनी गर्ज बिना दूसरेकी भलाईके लिए कोई बात किसी समयतक गुप्त रखना, अथवा किसी बातके तत्काल प्रकट करनेमें अकारण अपना नुक्सान होता होय तो अपने बचावका उपाय करने तक उस बातका स्पष्ट न कहना, अथवा किसीकी कोई बुरी बात जानकर निश्चै होनेतक निश्चै होनेके विचारसे छिपाना, अथवा किसी सच्ची बातको सुने वालोंके मनमें असर पैदा करनेके लिए चतुराईसे कहना, अथवा किसी लज्जाकी बातको ऐसे अक्षरोंमें, जिनसे औरका और मतलब न समझा जाय कह देना, छिपकर काम करनेकी गिन्तीमें नहीं है । परन्तु और सब तरहसे छिपकर काम करनेको अनीतिकी जड़ समझना चाहिये । कोई अनीतिका बीज सरोजनी अपने हाव, भाव द्वारा मेरे मनमें डाला

चाहती है। इस कारण सरोजनीका नाच देखनेसे आज मेरा मन बड़ा उदास हो गया। मैं अच्छी तरह जानता हूं कि, अन्तमें येही बातें मेरा सुभाव बिगाड़ छिपकर काम करनेवाली हो जांयगी । ऐसे मौकोंपर बहुधा मनुष्यका सुभाव इस रीतिसे बदलता है कि उसको अपने सुभाव बदलनेकी आप खबर नहीं रहती, परन्तु बदले पीछे वो अपना हाल देखकर आप चकित रह जाता है । हमारे वंशमें एक बड़ा लायकीवाला, सीधा सचा आदमी तीनसो रुपये महीनेमें नौकर हुआ था परन्तु नौकर होते ही खुशामदी उसके पीछे उगे, खर्च बढ़ गया रुपयेकी जरूरत हुई, तनखासे काम न चलसका, कर्ज काढ़नेका समय आया, कर्ज उतारनेके लिए रिशवत सिवाय कोई रस्ता न था अन्तमें छिपकर रिशवत ली। रिशवत लेना साबत हुआ और वो अपनी पहली चालको पिछली चालसे मिलाकर आप चौंक उठा, सब इज्जत धूलमें मिल गई । उस दिनसे मैंने सब बातोंमें अपना स्वरूप देखकर हद बांध रक्खी है और हर घड़ी अपने सुभावको जांचता रहता हूं। आमदनीसे कम खर्च रखनेकी प्रतिज्ञा है, परन्तु आज सरोजिनीका नाच देखनेसे मेरा मन भङ्ग हो गया ।

रिपुदमन—(मनमें) रणधीरसिंहका मन दृढ़ करनेके लिए ये समय बहुत अच्छा है । क्योंकि लाख पिगले विना उसपर मोहर नहीं लगती । (प्रकट) निसन्देह मनुष्य मात्रके मनमें काम, क्रोध, लोभ मोहका सोत रहता है और समय पाकर वो अपना वेग प्रकट भी करता हैं । परन्तु ज्ञानी अपने विचारसे उसका वेग रोक लेते हैं, और अज्ञान उसके भंवर जालमें पड़कर अपना विचार भूल जाते हैं, ज्ञानीको अपने विचारसे उसका वेग रोकनेमें कुछ परिश्रम पड़ता है परन्तु अज्ञान उसकी कटीली धारमें पड़कर आप वह जाते हैं । काम, क्रोधका वेग रोकना मनकी मजबूतीके आधीन है और वेग रोकनेकी रुचि उपदेशसे उत्पन्न होती है । रुचि विना मनकी दृढ़ता कुछ काम नहीं आती । इस कारण काम क्रोधका वेग रोकनेके लिए उपदेश मुख्य समझाना

चाहिये परन्तु गुरुके उपदेशको ही उपदेश नहीं कहते ; मनके लिए दुःख भोगना सबसे अच्छा उपदेश है। ये उपदेश कदाचित आपको हुआ होगा क्योंकि भगवान्ने आपको सज्जन बनाया है। आपकासा सुन्दर रूप, निरोगी देह, अलौकिक बुद्धि, अमित बल, उपस्थित विद्या, सदव्यवहार संसारमें कम दिखाई देता है। आपमें मिठाईके साथ सच बोलना, परोपकारके साथ इन्साफ पर रहना, उदारताके साथ अंदाजसे खर्च करना, प्रीतिके साथ धर्मपर दृढ़ रहना, पराक्रमके साथ नरमाई रखना, संसारमें रहकर विरक्त रहना, दृष्टि आता है। आपके इन गुणोंने आपको दुःखसे अवश्य बचाया होगा परन्तु आपसे मनुष्योंके मनमें केवल सुख भोगनेसे काम क्रोधके वेग बढ़नेका मुझको अबतक बड़ा भय रहता था सो आज आपकी अरुचि देखकर मिट गया। आपसे बुद्धिमानोंको दूसरोंके दुःख सुखसे अपने दुःखका विचार करके काम क्रोधका वेग सदा रोकना चाहिये।

रणधीर—बहुत अच्छा, आपके कहनेको मैं अंगीकार करता हूं और मेरा पहलेसे यही विश्वास है पर अब दूसरे झगड़ेका क्या करें? तहकीकातकी राहसे चौबेजीपर अपराध साबित हो गया परन्तु हमारा मन इस बातको नहीं मानता।

रिपुदमन—मनुष्य देहमें और प्राणियोंसे अधिक क्या है?

रणधीर—बुद्धि।

रिपुदमन—और वो बुद्धि कैसी अच्छी होती है।

रणधीर—सार-ग्रहिणी।

रिपुदमन—तो आपको उसी बुद्धिके बलसे इस बातका निर्णय करना चाहिये।

रणधीर—मेरी बुद्धिमें इस गोरखधन्देके खोलनेका अबतक कोई सुगम उपाय नहीं दिखाई दिया।

रिपुदमन—तो आप अपने किसी विश्वासपात्रसे सम्मति करके इसको खोलिये।

रणधीर--(मनमें) जैसे हर किसीकी वातोंमें आकर उसके आगे अपने दुःख सुखकी पसारठ खोल बैठना बुरा है तैसे ही सबको कपटी और मूर्ख समझकर किसीसे बात न करना बुरा है। (प्रकट) आपसे बढ़कर भरोसेवाला और कौन मिलेगा।

रिपुदमन--तो मेरे विचारमें आग विना धुंआ नहीं होता।

रणधीर--इससे क्या ?

रिपुदमन--पापी पाप करके गुप्त रहनेसे भी सुख नहीं पाता। उसको सबसे अधिक दुःख अपने मनकी व्याकुलताका है। इस लोकमें पाप प्रकट होनेसे दुर्गति और परलोकका नर्कभोग प्रति पल उसकी दृष्टिके सन्मुख बना रहता है। वो अपनी प्रतिष्ठा जतानेके लिए भले ही कुछ न कहे पर उसके मुखपर उसके भयकी झलक प्रकट दिखाई देती ही है वो झलक उस समय सुखवासीलालके मुखपर थी, उस समयकी हर एक बातसे सुखवासीलालका रङ्ग गिरगटकी तरह बदलता था।

रणधीर--ऐसे मौकेपर कलंकी होनेके डरसे निर्दोष भी कांपने लगते हैं।

रिपुदमन--श्वेत रङ्ग होनेसे कपूर, कपास एक भाव नहीं विकता।

रणधीर--मुझको पहले सुखवासीलालपर सन्देह था परन्तु चौबेजीके अंगरखेमें दाग निकलने और उनके मन्जूर करनेसे अब नहीं रहा।

रिपुदमन--हमारी नजरमें दोनों एकसे हैं परन्तु ऐसे मामलेमें केवल अपराधीके कहनेपर विश्वास न करना चाहिये क्योकि बहुतसे निरपराधी घबराहट, दवाव, दुख दर्द, दया, अथवा नशेसे बावले होकर अपने आप मरनेको तयार हो जाते हैं इसी तरह चौबेजीने भी हमारी कहनको अपनी बड़ाई समझकर मन्जूर किया हो तो अचरज नहीं। मैंने ऐसे बहुत अविचारी मनुष्य देखे हैं जो अपनी बड़ाईके लालचसे ऐसे अनेक उपाय किया करते हैं। जिन चिलबिले लड़कोंसे महनत नहीं होती वो अपने मा बापको अपनी सुकुमारताका धोका देकर

ठगते हैं और जिन मूर्खोंको विद्या नहीं आती वो विद्यावान बनकर छोटे रुज-गारमें अपनी स्वरूप हानि बताते हैं, जिन छिचोरोंकी तरफ कोई स्त्री प्रीतिसे नहीं देखती वो अपने संगातियोंमें बैठकर झूंठी बातें बनानेमें अपनी बड़ाई समझते हैं, जिन दरिद्रियोंके पास धन नहीं होता वे धनवानोंके पास बैठकर झूंठी दौलत दिखानेका रूप बनाते हैं।

रणधीर—आपकी कहन मेरे मनपर असर करती है और मैं ये भी जानता हूं कि बहुधा इस तरहकी बनावट और चालाकी सुखवासीलाल सरीखे अधकच्चे मनुष्योंसे होती है। जो लोग बिल्कुल अजान हैं उनको तो ऐसी बातें उपजती ही नहीं; जो पूरे हैं वे परिणाम सोचकर ऐसी बातोंसे बचते हैं पर अधूरे परिणाम तक तो पहुंच नहीं सकते और जीविका करनेका साहस करते हैं इस कारण उनसे बहुधा ऐसी बनावट और चालाकी होती है परन्तु सुखवासीलालके अपराधपर हरताल-की तरह बरेहकी मट्टी लग गई। (हंसकर) आप मेरे कहनेका कुछ बुरा न मानें जिससे मेरी प्रीति होती है उससे मैं भीतर, बाहर एकसा रहता हूं।

रिपुदमन—ये ही बात मेरे मनकी बढ़ानेवाली है, मुझको बड़ा अचंरज है कि आपसे बुद्धिमान ऐसी मोटी बातमें धोका खाते हैं पर अपने बचावके लिए दूसरी चाल नहीं सोचते!

रणधीर—अच्छा, आपके कहनेसे मैं फिर उखाड़ पछाड़ करता हूं। सब काम क्रमसे करने चाहिये। (पुकार कर) अरे जीवन यहां आना। (धीरे रिपुदमनसे) इसपर मुझको बड़ा भरोसा है।

रिपुदमन—घर गृहस्थके काममें तो ये लोग अक्सर गड़बड़ कर जाते हैं।

रणधीर—किसी थोकके सब आदमी एकसे नहीं होते।

(जीवनका प्रवेश)

रणधीर—(गम्भीर स्वरसे) क्योंरे ! हमारे पास इतने दिन रहा तो भी तेरी चाल न सुधरी । कुत्तेकी पूंछको वारह बरस दबाकर रक्खा तो भी टेढ़ीकी टेढ़ी ही रही, जेवड़ी जल गई पर वल न गया । सच कह तेरी इस वेश्यासे कितने दिनकी जानपहचान है ?

जीवन—(मनमें) लालाजी बुरा माने तो भलेई मानों मैं ये हकीकत कहनेके लिए पहलेसे औसर देख रहा था परन्तु जिस समय मुझसे कोई धमका कर पूछता है उस समय डरके मारे मेरी घिग्गी बंध जाती है । (कंपकंपाकर, भयभीत स्वरसे) ये दश रुपे आज सवेरेसे मैं आपको दिया चाहता था पर एकान्तका समय नहीं मिला ।

रणधीर—हमारी वातका जवाव दे, वीचमें दूसरी वात क्यों मिलाता है ?

रिपुदमन—डरके मारे इसके मुखसे कुछका कुछ निकलता है । इसको धीरजसे कहने दीजिये । (जीवनसे) कहरे कह ।

जीवन—आपने पूछा सोई कहता हूं । हम लोगोको भर पेट अन्न नहीं मिलता हम वेश्या रांडको क्या जाने !

रणधीर—तेरी एक वात दूसरी वातसे नहीं मिलती । क्या चौवेजीने तुझको भंग पिला दी । वता, ये दश रुपे कैसे हैं ?

जीवन—नहीं अन्नदाता, मैंने भंग नहीं पी । मैं नौकर होकर भंग कैसे पीता । ये दश रुपे आपके हैं मुझको ऐसी कौड़ी अपने अंग नहीं लगानी ।

रणधीर—अच्छा, कहांसे, किस वातके, कव आये ?

जीवन—(घवराकर) क्या पूछा ।

रिपुदमन—(धीरजसे) वता ये दश रुपे कहांसे आए ?

जीवन—लाला सुखवासीलालजीसे।

रिपुदमन—किस बातके?

जीवन—इनामके नामसे घूंसके।

रिपुदमन—कब?

जीवन—कल रातको, वे वेश्याके जाते थे जब।

रणधीर—तैनें कैसे जाना कि वेश्याके जाते हैं?

जीवन—मैं उनके पीछे पीछे जाकर अपनी आंखसे देख आया।

रणधीर—देख, झूंट न हो?

जीवन—झूंट निकले तो मेरी नाक काट लेना!

रणधीर—अच्छा, जा सुखवासीलालको बुला ला!

(जीवन गया)

रणधीर—यहां तो हाथ लगाने ही की देर थी।

रिपुदमन—पर अभी अंगरखेके धब्बेका धोखा बाकी है।

रणधीर—(विचार कर) ओहो! न्हानेके समय छल करके सुखवासीलालने चौबेजीसे अंगरखा बदल लिया होगा, नहीं तो उस समय सुखवासीलालके न्हानेका क्या काम था? और न्हाने गया तो कमलनालसे डरकर निकल भागनेकी कौनसी बात हुई।

रिपुदमन—(मनमें) मनुष्यके हृदयमें क्रोधका अन्धकार होते ही अपराधीके अगले पिछले सब अपराध तारागणकी तरह क्रोधीकी दृष्टिसे साम्हने आ जाते हैं इस कारण बुद्धिमानको छोटीसे छोटी बातके लिए भी उसी समय सफाइ कर लेनी चाहिये।

रणधीर—ये आदमी पहले भी कइ वार मुझको धोका दे चुका है अपना असली सुभाव कोई नहीं छोड़ता। कोयलके बच्चोंको पक्षी समझ पालते हैं पर वे बड़े होकर अपनी जातमें आपसे मिल जाते हैं!

(सुखवासीलाल और जीवनका प्रवेश)

सुखवासीलाल—(धीरे जीवनसे) तैंने ये वात अच्छी नहीं की, घीके बाप आपसमें सुलूक रखना चाहिये।

जीवन—(पुकारकर) मैं अपनी भुगत लूंगा।

रणधीर—(सुखवासीलालसे रूखे होकर) कल रातको तुम सरोजनीके घर गए! आज अंगूरकी टट्टियोंमें उससे बतलाए, तालावमें न्हानेका मिस करके चौवेजीसे अंगरखा वदला ये सब हाल हमको अच्छी तरह मालुम हो चुका है। अव तुम अपनी भलाई चाहते हो तो एकदम अपनी भूल मन्जूर करो।

सुखवासीलाल—(मनमें) नौकरीकी क्या? ये तो मजदूरी है। नान पारचेका काम हर तरह चला लेंगे मगर जब ये बात पोशीदा नहीं रह सकती तो थोड़ी जिन्दगीके वास्ते कौन लवगोई करके दोजखमें जानेका काम करें। (प्रकट) कसूर हुआ तो हुआ, न हुआ तो हुआ इस वक्तमें आपकी नजरमें वेशक कसूरवार हूं।

रणधीर—अच्छा, तुमको अपने वचावके लिये कुछ कहना हो तो कह लो।

सुखवासीलाल—कुछ नहीं।

रणधीर—तो जाओ।

(सुखवासीलाल और जीवन गए)

रिपुदमन—अब इससे सब तरह सावचेत रहना चाहियें, "वेदिल नौकर दुश्मन बराबर" होता है।

रणधीर—मैं अब इसको घड़ी भर अपने पास नहीं रखा चाहता, परन्तु दूसरा आदमी न मिलेगा तबतक लाचारीसे रखना पड़ेगा।

रिपुदमन—देखो, जिसकी प्रसन्नता और अप्रसन्नताका कुछ फल नहीं मिलता, उसका काम कोई मन लगाकर नहीं करता। सब उससे निर्भय हो जाते हैं और वो सबकी नजरमें हल्का जंचने लगता है।

रणधीर—ओ हो! आज आप न होते तो कैसी बेइन्साफी हो जाती।

रिपुदमन—इन्साफमें सदा इसी तरह सोचना चाहिये। अपराधीपर दया करनेकी बहुत लोग सूचना करते हैं और अपराध निश्चय हुए बिना किसीको दण्ड देना मेरे विचारमें भी अनुचित है, परन्तु अपराध निश्चय हुए पीछे अपराधीपर दया करना निरपराधियोंको दण्ड देनेसे कम नहीं। अपराधीको यथायोग्य दण्ड देना चाहिये; क्योंकि अपराधीपर दया करनेसे लोगोंके मनमें अपराध करनेका साहस होता है। एक दो मनुष्यको दण्ड देनेसे सब देशका उपकार हो तो दण्डकर्त्ताको निर्दय कैसे समझें? अजान कुछ कहो, मनकी दृढ़ता इन्तजामकी दृढ़ताका मूल है और इन्साफमें दया करनेवालोंके मनकी दृढ़ता सम्भव नहीं।

रणधीर—मैं तो पहले ही दुखवासीलालके निकालनेका विचार कर चुका हूं।

रिपुदमन—हमको सुखवासीलाल और चौबेजीसे कुछ विशेष सम्बन्ध नहीं है परन्तु इस समयके इन्साफसे हमारे मनको बड़ा सुख होता है।

रणधीर—शरीरके सुखसे मनका सुख बिल्कुल अलग है। मनके सुख बिना शरीरके सुख कुछ काम नहीं आते। शरीरके दुःखसे मन व्याकुल हो तो शरीरके सुखसे मनको सन्तोष आ जाता है, परन्तु शरीरके सुखसे मन सुखी नहीं होता। मन सब बातोंमें शरीरका सहायक है परन्तु मनकी शक्तिसे (जिसमें शरीर नाम-

मात्र सहायक हो) आजके इन्साफकासा कोई अलौकिक काम वन जाता है तव मनको असली सुख होता है और इसके आगे शरीरका सुख कुछ नहीं जंचता।

रिपुदमन—अच्छा अव रात वहुत गई मुझको आज्ञा हो।

रणधीर—मैंने भी आज इस मामलेको बड़े एकाग्र चित्तसे विचारा था इस कारण इस समय नींदकी गहलसी आ रही है।

रिपुदम—(जाते जाते) कल आपको वहीं आना चाहिये। (गया)

इति चतुर्थ गर्भाङ्क।

द्वितीयांक समाप्त।
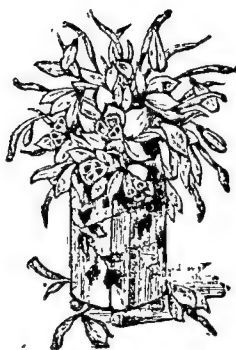
अथ तृतीयांक प्रारम्भ ।

प्रथम गर्भाङ्क ।

स्थान, राजमहलके पास रंगभूमि ।

(बीचमें रत्नजटित चौकीपर प्रेममोहिनीकी प्रतिमा रक्खी है और उसके सामने अनेक देशके राजा धनुपकर बैठे हैं । प्रेममोहिनी अपने महलोंमेंसे ये उत्सव देख रही है और सूरतका सेनापति रङ्गभूमिके दरवाजेपर खड़ा है ।)

(सूरतके महाराज और मन्त्रीका प्रवेश)

सूरतके महाराज—सब राजा आगए ?

मन्त्री—हां महाराज ! इस समय उनके रत्नोंकी झलकसे रंगभूमि दिवालीकी रातके समान जगमगा रही है।

× × × × × × ×

प्रेममोहिनी—(मालतीसे) क्यों सखी ! सब राजकुमार आगए ?

मालती—हां, अभी मन्त्रीने महाराजसे कहा था ।

प्रेमोहिनी— तो रणधीर क्यों नहीं आया ?

मालती—तुम क्या उसको पहचानती हो ?

प्रेममोहिनी—मैंने उसको देखा नहीं, पर उसकी छवि मेरे मनमें बस रही है ।

मालती—इन राजकुमारोंमें तुमको कोई सुहावना नहीं लगता ?

प्रेममोहिनी—क्या चन्द्रमा बिना कमोदनीको कोई खिला सकता है ।

माल्ती—भला मकरन्द (रस) के लालचसे भौंरा उसके पास चला जाय तो ?

प्रेममोहिनी—कमोदनीको जलमें डूबने सिवाय कुछ उपाय नहीं ।

मालती—ये सब बातें पिताके आगे भूल जाओगी ।

× × × × × × ×

(सूरतके महाराज कुछ आगे बढ़े और सेनापतिने झुककर रामराम की)

सूरतके महाराज—(सेनापतिसे) भीड़का बन्दोबस्त अच्छी तरह कर दिया ?

सेनापति—आपके प्रतापसे सब हो रहा है ।

सूरतपति—(आगे बढ़कर, राजाओंसे) आप लोगोंने यहां आकर मेरे ऊपर बड़ी कृपा की ।

सब राजा—(खड़े हो कर, एक स्वरसे) ये आपकी बड़ाई है । फलदार वृक्ष सदा नवते हैं, अब हम आपकी कौनसी आज्ञा पालन करें ?

सूरतके महाराज—आज आप अपनी शस्त्र विद्या दिखाइये, जो वीर शस्त्र विद्यामें जीतेगा उसको बड़ा जस और (प्रेममोहिनीकी मूर्ति दिखाकर) इस प्रतिमाकी अधिष्ठाता देवी (प्रेममोहिनी) आपसे आप सिद्ध हो जायगी ।

सब राजा—(आनन्दसे) ऐसा ही होगा ।

सूरतके महाराज—अच्छा, आप किस रीतिसे अपनी विद्या दिखायंगे ?

नगरका राजा—कहनेसे क्या है जो कुछ करें अपनी आंखसे देख लेना ।

(रणधीर घोड़ेपर सवार होकर आता है)

सेनापति—(रणधीरको रोक कर) तुम कौन हो ?

रणधीर—रणधीर ।

सेनापति—(हंसकर) रणभीरूका यहां क्या काम ?

रणधीर—मालूम हुआ आप अन्धे नहीं बहरे भी हो ।

सेनापति—तुम अपनी कुशल चाहते हो तो उल्टे फिर जाओ !

रणधीर—हाथीके दांत निकले पीछे भीतर नहीं जाते ।

सेनापति--तो लाचार उनको तोड़ना पड़ेगा परन्तु तुमारा रूप देख कर मेरे मनमें दया आती है।

रणधीर--मेरे ऊपर नहीं अपने कुटुम्बपर दया करो।

सेनापति--तुमसे क्या लड़ें, लड़ाई बराबरवालेसे होती है।

रणधीर--सच कहा, मैं तुम्हारे लिए अपना नौकर बुला दूंगा।

सेनापति--अब तुम मेरे आगेसे हट जाओ।

रणधीर--अपनी आंखें क्यों नहीं बन्द कर लेते!

सेनापति--(खड्ग दिखाकर) देखो इसकी धार बड़ी तेज है।

रणधीर--पर तुम्हारे वचनोंसे तो अधिक न होगी।

सेनापति--तुम अभी बालक हो!

रणधीर--तो हम पूतना वधका अनुकरण करेंगे।

सेनापति--(क्रोधसे) मुख सम्हाल कर नहीं बोलते!

रणधीर--हमने क्या झूट कहा?

सेनापति (पैंतरे बदल कर) अच्छा तो आओ।

{ रणधीरने बिना भालेका एक भाला मार कर सेना-पतिको पांच सात गज ऊंचा उछाल दिया। }

सूरतके महाराज--(देखकर जल्दीसे) जो वीर इस समय हमारे सेनापतिको बचावेगा वोही आजकी शस्त्र विद्यामें जीतनेवाला समझा जायगा।

(सब राजा इधर उधर दौड़े पर किसीसे कुछ न हो सका। रणधीरने घोड़े समेत ऊंचे उछल कर सेनापतिको गिरते गिरते रोक लिया और सूरतपतिके आगे लाकर खड़ा कर दिया।)

सूरतपति--(उसे देखकर मनमें) इसके बदले तो सेनापतिका मर जाना अच्छा था; हे देव! तुझको ये क्या सूझी? चन्द्रमाका मित्र चकोर! कांटेदार वृक्षमें गुलाब! सूरतकी महाराज कुमारीका पति एक साधारण परदेशी! अब मैं अपने वचनसे फिरता हूं तो मेरा विश्वास जाता है और वचनपर रहता हूं तो कन्या जाती है! क्या करूं? सांप छुछून्दरकीसी मेरी दशा हो रही है। (उदास भावसे सिर झुका लिया।)

रणधीर--(सूरतके महाराजको उदास देखकर, मनमें) तुम्हारे उदास होनेसे मेरा क्या नुकसान? मैंने किसी तहरके लालचसे ये काम नहीं किया मैं तो केवल जस चाहता हूं;—

मेघन कबई न जल चहौं, चातक सम तो पास।
मैं मयूर मीठे वचन सुन, मन करत हुलास॥

जो तुम बुरा मानो तो अपना नगर रक्खो मेरी विद्या नहीं छीन सकते।—

विधना कोपै हंस पर, हरै कमल वन वास।
पैजल दुग्ध विभेदगुण, किंहिं विधि करै विनास?

(आगेको चल दिया)

× × × × × × ×

प्रेममोहिनी—(मालतीसे) आज समुद्रने अपनी मर्यादा छोड़ दी, सूर्य चन्द्रमकी चाल बदल गई, अग्निमें दाहक शक्ति नहीं रही, पवनकी वाहक शक्ति जाती रही।

मालती—कैसे?

प्रेममोहिनी--मेरा मन इस पुरुषकी तरफ गया।

मालती--तो क्या तुम किसीसे विवाह नहीं किया चाहती?

प्रेममोहिनी--रणधीर सिवाय मैं किसीको पुरुष नहीं समझती।

मालती--और जो ये रणधीर ही हो।

प्रेममोहिनी--सच कह, क्या ये रणधीर है?

मालती--ना, मैंने एक वात कही कि जो ये वोही हो।

प्रेममोहिनी--तव तो कुछ कहने सुननेकी वात ही नहीं रही।

मालती-- (दोहा)

सज्जन प्रीति वियोग ते, कबहु न होत विनाश।
चन्द ढक्यो घनसे तदपि, करत कुमोद प्रकाश॥

प्रेममोहिनी--(आंसू भरकर, गद्गद स्वरसे) सखी! मेरे ऐसे भाग-- (नेत्र बन्दकर वेसुधसी हो गई)

मालती--(महलके नीचेसे रणधीरको जाते देख) राजकुमारी! इष्ट देवका ध्यान पीछे करना, पहले दूजके चन्द्रमाका दर्शन तो कर लो।

(प्रेममोहिनीने नेत्र खोलकर रणधीरको जाते देखा। अचेत अवस्थामें उसकी अंगूठी उसके हाथसे रणधीरपर गिर पड़ी। रणधीरने अंगूठीको हाथमें झेलकर प्रेम-मोहिनीकी तरफ देखा। वो अंगूठी अपनी अंगुलीमें पहनकर वहांसे चल दिया।)

प्रेममोहिनी--(रणधीरकी तरफ देखकर) रणधीर! तुम सच्चे रणधीर हो! आज तुमने अपना नाम सच्चा कर दिखाया। तुम्हारा मुखचन्द्र देखकर मेरा मन समुद्रकी तरह उमगता है। (झरोखेसे नीचेकी तरफ देखकर) हाय! वे तो चले गए। विजलीकी चमकसे भी थोड़ी देर उनका मनोहर रूप दिखाई दिया। अव क्या होगा।

माल्ती--धीरज धरो, ये समय घवरानेका नहीं है।

\+ + + + + + + +

सूरपति—(सिर ऊंचा करके) वो मनुष्य कहां गया ? (मन्त्रीसे) तुम उसको पहचानते हो ?

मन्त्री—मेरी उसकी बातचीत कभी नहीं हुई, पर मैंने सुना था कि कोई बड़ा गुणवान क्षत्री राजमहलके पीछे आकर ठैरा है ।

सूरतपति—अच्छा वो यहां होता तो उसका हाल पूछा जाता । परन्तु आजकी जीतसे वो प्रेममोहिनीके ब्याहने लायक नहीं ठैरता । बिल्लीके भागों छीका टूट पड़ा तो क्या हुआ ? मैंने ये प्रतिज्ञा राजाओंके लिये की थी । अब इसका फिर कुछ विचार किया जायगा । आज रातको महलमें वसन्तपञ्चमीका उत्सव है, सब राजा कृपा करके वहां पधारें ।

सब राजा—हमको आपका कहना सब तरह मंजूर है । (सब गए)

इति प्रथम गर्भाङ्क ।

——*——

अथ द्वितीय गर्भाङ्क ।

स्थान रणधीरसिंहका महल ।

{ रणधीर मखमली कोंचपर सिरहाने हाथ लगाकर
लेट रहा है और जीवन उसके चरण दावता है । }

जीवन--(चरण दावते दावते) इस समय आपका मन वहुत उदास दिखाई देता है ।

रणधीर--तैंने कैसे जाना ?

जीवन--आपके मुख देखनेसे प्रकट जाना जाता है ।

रणधीर--(आश्चर्य्यसे मनमें) मेरे मनका भाव दूसरेने पहचान लिया । (प्रकट) अच्छा, तू क्या अवतक इसका कारण नहीं जानता ? देख आज हमारे दुःखकी आगमें घी डाला गया । तू अच्छी तरह जानता है कि हम केवल मानके भूखे हैं, हमारी जानमें अपमान और मौत समान है ।

जीवन--आपको दुःख देखकर घवराना उचित नहीं । आप महत् पुरुष हो ;—

> वड़े विपतहूंमैं पड़े तजत न पर उपकार ।
> राहु ग्रसित शशि जगतको पुण्य वढ़ावनहार ॥१॥
> मलय करत निज गन्धसों वृक्षन आप समान ।
> कहहु करत कछु मलयको वृक्ष वहुरि सन्मान ॥२॥

रणधीर--इस विचारमें तू भूलता है, क्योंकि थोये वासोंका चन्दनसे कुछ भी उपकार नहीं होता । उपकार तो उपकार योग्योंके साथ होता है पर (आंखोंमें

आंसू भरकर) हम तेरी नौकरीका इस जन्ममें क्या वदला देंगे ? हमको क्षमा कर, नहीं तो परलोकमें हमको तेरा देनदार रहना पड़ेगा ।

जीवन---ये आप क्या कहते हो ! मैं किसका और नौकरी किसकी । जो मैं सौ जन्मतक आठ पहर आपकी सेवा करूं तो भी तो आपकी कृपासे आगे कुछ गिन्तीमें नहीं ।

रणधीर---जीवन तेरी लायकीसे मैं तुझपर नौछावर हूं ।

जीवन---आप ऐसा वचन मत कहो ।

रणधीर--- विपत मनुष्यकी कसौटी है, इसमें पीतल और सोनेका भेद खुल जाता है । विपत्तिमें मनुष्यको परमेश्वरसे प्रीति होती है । देख, एक दिन ऐसा था कि वड़े वड़े धनवान आकर मेरी हाजरी साधते, मुझसे प्रीति वांधते, मुझपर प्राण नौछावर करते, मेरे सच्चे मित्र वनते । परन्तु आज वे सव कहां हैं, मेरी विपत्तिमें मुझको कौन सहारा देता है, कौन याद करता है, कौन सेवा करता है ? कोई नहीं, हिरफिरकर तू ही तू दिखाई देता है । भाई है तो तू है, मित्र है तो तू है, नौकर है तो तू है ।

जीवन---महाराज ! उस समय आपकी दयासे मेरा घर वसा, आपके रुपैसे मेरा पालन हुआ । आपकी कृपासे मैं जीआ, वड़ा हुआ तो क्या ऐसे समयमें आपको छोड़ जाऊं ? भगवान आपको जीता रखे । जीवन जीते जी कभी आपके चरणकमलसे अलग होनेवाला नहीं है ।

रणधीर---ओ सच्चे मित्र ! सूखे वृक्षकी छायामें ठैरकर परदेशी क्या सुख पावेगा ? भला तू अव मेरी सेवासे क्या आस रखता है ? जव मुझसे तेरे कुटुम्बका पालन भी नहीं होता तो मेरे पास रहनेसे तेरा क्या भला होगा । तेरी इस मुफ्तकी चाकरीका मैं क्या वदला दूंगा !

जीवन—महाराज आपने ये क्या कहा, मैं मुफ्त चाकरी नहीं करता। सब आदमी काम लेकर तनखा देते हैं, पर आपने तो मुझको पहले ही निहाल कर दिया।

रणधीर—(आंसू भरकर) जीवन! तू अपनी सचाईसे मुझको बड़े अचरजमें डालता है। तू पहले मेरा सेवक था, परन्तु अब तो सहायक मित्र है। तेरे चालचलनसे गरीबोंकी सचाईका एक अच्छा प्रमाण मिलता है। मैंने अपनी दौलत इन झूठे खुशामदियोंकी खातिरदारीमें खोई, उसके बदले जो गरीबोंकी सहायतामें लगाई होती तो कैसा अच्छा होता? वे लोग कभी मेरी याद भी करते हैं?

जीवन—(मनमें) देखो, मनुष्यका मन भी पवनकी तरह सदा बदलता रहता है। ये रणधीरसिंह जो एक बार बड़े गम्भीर, रूखे, कठोर और बेपरवाह थे वे समयके फेरफारसे आज कैसे नरम और सीधे हो गए?

रणधीर—तू ये मत समझ कि, मैं दुःखसे घबराकर ये बात कहता हूं। दुःख सुख तो दिन रातकी तरह बदलते रहते हैं और मैंने श्रीरामचन्द्र, हरिश्चन्द्र, नल, युधिष्ठिर आदिकी कथा पढ़ी, इस कारण मेरे मनमें धीरज बन रहा है। मुझको मनुष्योंके स्वभावका अच्छी तरह अनुभव है जैसे गरमीकी रुतमें प्रायः गरम और सरदीकी रुतमें सरद चीज पैदा होती हैं। जैसे हवाका रुख पलटते ही सब झंडियोंका रुख अपने आप बदल जाता है, तैसे आदमीके होनहारसे सब लोगोंका मन भी उसकी तरफको वैसा ही हो जाता है और उसके होनहारसे ही लोगोंके मनमें उसका रूप हल्का भारी जंचने लगता है। एक बार एक आदमीकी बातें सुहावनी लगती हों, दूसरी बार बेसबब उससे मन हट जाय, उसकी बातें बुरी मालूम होने लगे अथवा जिससे अरुचि हो उसकी बातें सुहावनी मालूम हों तो ये उसके होनहारका कारण नहीं तो और क्या है? बहुत कहांतक कहूं? होनहारके बलसे

खास उस आदमीके मनमें भी वैसे ही विचार पैदा हो जाते हैं; जब हर्ष होनेवाला हो, उस समय हर्षकी कोई बात न होगी तो भी पहली हर्षकी बातें याद आने अथवा आगेको आनन्द होनेकी उम्मेदसे मन हर्षित हो जायगा। इसी तरह जब दुःख होनेवाला होगा उस समय कोई दुःखकी बात न होगी तोभी पहले दुःख याद आने अथवा आगेको अपने ऊपर किसी तरहके दुःख पड़नेका भय होनेसे चित्त उदास हो जायगा। जैसी होनहार होगी, तैसे काम करनेको मन चाहेगा वैसा ही वानक बन जायगा। होनहार बातोंका रूप मैं अच्छी तरह जानता हूं; होनहार किसीके अटकाएसे नहीं अटकती, परन्तु जब मुझको इन झूठे खुशामदियोंकी बातें याद आती हैं तब मेरे शरीरमें आग लग जाती है। बता, आजहीके अपमानमें किसने मेरा साथ दिया?

जीवन—आज आपका क्या अपमान हुआ?

रणधीर—मुझको रङ्गभूमिमें जानेसे रोका, इससे बढ़कर और क्या अपमान होगा?

जीवन—ये तो आपको ऐसा ही भासता होगा। पित्तेदार मनुष्यके लिए कोई जरासी बात हो जाती वो उसको खुर्दबीनकी भांति अपने मन ही मनमें सोच सोचकर पहाड़की बराबर बना लेता है, परन्तु सबके लिए सब एकसे नहीं होते। एक मनुष्य एकका बड़ा दूसरेका छोटा, एकका गुरु दूसरेका शिष्य, एकका स्वामी दूसरेका सेवक, एकका शत्रु दूसरेका मित्र, एकका पोषक दूसरेका नाशक होता है। एक ही वस्तु एककी लाभदायक और दूसरेकी हानिकारक बन जाती है। देखिये, एक मनुष्यको फूलोंकी सेजपर नींद नहीं आती, दूसरा मिट्टीके ढेलोंपर पांव पसारकर सोता है। इसी तरह आपका विचार और लोगोंसे जुदा है। आप जिस कामसे अपनी स्वरूप हानि बताते हो उसी कामसे आज आपका यश सारे नगरमें फैल गया।

रणधीर--जगतकी कोई बात गुण दोषसे खाली नहीं पाई जाती, परन्तु जिस बातमें गुण विशेष हो सो अच्छी और दोष विशेष हो सो बुरी समझी जाती है। इस कारण आजकी बात में तेरे वचनानुसार कुछ गुण हो तो उसको अच्छी नहीं मान सकता, क्योंकि उसमें दोष विशेष हैं।

जीवन--क्यों? आप क्या इसको छोटी बात समझते हैं? मेरे जाननेमें तो आपको इस समय भी सूरतके महाराजकी सभामें अवश्य पधारना चाहिये।

रणधीर--जीवन, तैने क्या कहा? तू नहीं जानता कि मेरे मनमें क्रोधकी आग जल रही है, फिर तू उसमें घी डालकर उसके भड़कानेका क्यों उपाय करता है? न जाने ये आग किस किसको भस्म कर डालेगी।

जीवन--मैं इस बातसे निश्चिन्त हूं, क्योंकि आगको आग नहीं जला सकती। आप आनन्दसे राजसभामें जायं। हाथीके चपेट मारे विना सिंहका बल नहीं जाना जाता और भाग्यपर बैठ रहना तो कायरोंका काम है।

रणधीर--भला जीवन! विना बुलाये जाना तो किसी तरह मुनासिब नहीं।

जीवन--सब राजोंके बुलावेमें आपका बुलावा आ गया फिर आपको यही विचार है तो बताइये बादलोंको कौन बुलाने जाता है जो पानी बरसाकर सबकी ताप मिटाते हैं?

रणधीर--(मनमें) इधर विश्वासी जीवन भी हठ करता है, उधर मेरे मनमें भी वीर रस भर रहा है इस कारण अब तो राजसभामें जायंगे, होनी होय सो हो। (प्रकट) अच्छा, जीवन तेरा कहना माना, अब तू हमारे पांचों शस्त्र और वस्त्र लेआ।

जीवन--(जाते जाते) लाया, (जाकर सब सामान लाता है और रणधीर वस्त्र पहन, शस्त्र सज, दर्पण देख, जानेको तैयार होता है तब जीवन जल्दीसे जलका भरा कलश ले सामने आ खड़ा होता है।)

रणधीर--ऐसे शकुनका फल नहीं होता, जो शकुन आपसे आप हो उसकी विध मिलती है ।

जीवन--तो भी नफेकी हवा ही अच्छी ।

(आगे आगे रणधीर और पीछे पीछे जीवन जाता है ।)

इति द्वितीय गर्भाङ्क ।

---*---

अथ तृतीय गर्भाङ्क ।

स्थान सूरतका राजमहल ।

(सब राजा बराबर बराबर कुर्सियोंपर बैठे हैं, सरोजनी नाचती है, मन्त्रीने अतरदान ले रक्खा है, सूरतपति अतर लगाते हैं, रिपुदमन पान देता है ।)

रिपुदमन—(मनमें) रणधीरसिंह अबतक क्यों नहीं आए । उनकी जीतका हाल सुनकर तो मुझको ऐसा आनन्द हुआ जैसा जनकपुर वासियोंको श्रीरामचन्द्रजीके धनुष तोड़नेसे हुआ था । रणधीर निस्सन्देह इस बड़ाईके लायक है परन्तु पिता (सूरतके महाराज) ने परशुरामजीकी भांत नाहक हट पकड़ रक्खा है । मैं रणधीर सिंहका सब भेद जानता हूं, मेरा उनका कुछ अन्तर नहीं है । परन्तु मैं उनकी आज्ञा बिना एक अक्षर नहीं कह सकता और कहनेमें अधिक बिगाड़की सूरत मालूम होती है, इस कारण और भी मौन साध रक्खा है ।

(रणधीर आया । उसे देखकर सब राजा चकित हो इधर उधर देखने लगे । वो निर्भयतासे सभाके बीचमें एक खाली कुर्सीपर जा बैठा और टकटकी बांधकर सरोजनीकी तरफ देखने लगा ।)

सूरतपति—(मन्त्रीसे, धीरे,) ये ढीट यहां बिना बुलाए क्योंकर चला आया ? इसको यहांतक पहरेवालोंने कैसे आने दिया ? जहां किसी बातमें मालिककी तरफसे जरासी भूल होती है, वहां अन्धेर मच जाता है, नौकर निर्भय हो जाते हैं । परन्तु हम क्या करें ? कामके फैलावसे हमको औसान नहीं आता । तुमने इसका बन्दोबस्त क्यों नहीं किया ?

सूरतका मन्त्री—महाराज ! बन्दोबस्त तो अच्छी तरह कर दिया था परन्तु ये भीड़में छिपकर आ गया होगा, टीडीकी मौत आती है जब वो अपने परोंसे उड़कर आगमें जा पड़ती है ।

रिपुदमन—(धीरे) पिताजी ! ये आपके घर आया है, आपको अपना धर्म विचारकर काम करना चाहिये, आप क्या ऐसे सज्जनका निरादर करेंगे ? मैं इसके गुण अच्छी तरह जानता हूं । कहिये, इसने आपका क्या बिगाड़ किया । हट जुदी चीज है । आप इनसाफसे विचार कर देखें तो ये सबसे अधिक सन्मानके लायक है । इसको आपने साधारण आदमी कैसे जाना ? क्या इसके सब लक्षण चक्रवर्त्तीसे नहीं मिलते ! इसका सुन्दर रूप प्रेमसोहिनीसे व्याहन लायक नहीं है ? क्या इसकी बाण विद्याने अर्जुनका गांडिव (धनुष) नहीं भुला दिया ? फिर आप क्यों जान बूझकर सोते सिंहको जगाते हैं ? थोड़े लालचसे बहुतसा नुकसान करना नीतिके विपरीति है ।

(सरोजनी रणधीरके आगे जाकर कहरवा नांचने लगी)

कैसे लगे मेरी नाव खेवट तेरे रूठे पर ?
भला कैसे लगे मेरी नाव खेवट तेरे रूठे पर ।
नाव झर्झरी नदिया गहरी वल्लिके करसे छूटे पर । भला कैसे० ।
उठत हिलोरैं पालकी रस्सीके टूटे ॥ भला कैसे० ।
बीच धार मैं हात तजत कोउ तन मन धनके लूटे पर ।
भला कैसे लगे मेरी नाव खेवट तेरे रूठे पर ॥ १ ॥

रणधीर—(मनमें) ये कल चौबेजीके वखेड़ेसे खाली रह गयी थी इस कारण इसको इस समय कुछ देना चाहिये । (अपने गलेसे मोतियोंकी माला उतार कर दे दी ।)

सूरतके महाराज--(रिपुदमनसे) कहो ये इस कामसे कलंकी हुआ कि नहीं ?

रिपुदमन—कलंकी तो चन्द्रमा भी है, मैं इतने अंशमें रणधीरसिंहकी बड़ाई नहीं करता। बहुत लोगोंका सुभाव होता है कि जिससे प्रीति हो उसके गुण, और वैर हो उसके दोष प्रकट करते हैं। परन्तु ये रीति अच्छी नहीं। जो जितने अंशमें जैसा हो, तैसा कहना चाहिए। रणधीरके स्वाभाविक गुण क्या कम हैं, जो मैं झूंठी बड़ाई करके उनमें दोष लगाऊं, मित्रके दोष छिपानेसे छुड़ाना बहुत अच्छा है।

सब राजा—(पुकारकर) ये हमारा बड़ा अपमान हुआ, हम इसका बदला लिए विना न रहेंगे।

रिपुदमन—घासकी आगसे लड़ाई क्या ?

सुरतपति—(क्रोध करके रिपुदमनसे) तू क्यों उसकी पक्ष करता है ?

रिपुदमन—मैंने आजतक आपकी आज्ञा विना कभी किसी कामका मनोर्थ भी नहीं किया और आगेको आपकी आज्ञा पालन करनेका निश्चय विचारा है, परन्तु जिस विषयमें आज्ञा न निभ सके उसमें प्रथम ही आपको आज्ञा देनी मुनासिव नहीं। आप जानते हैं कि, मन अपनी पूर्ति हुए विना किसीके भय अथवा लिहाजसे नहीं वदल सकता।

सूरतके महाराज—(मनमें) ये तो वात बढ़ चली। जिसने जन्मभर सामने आंख करके वात नहीं की थी, उसने आज एकदम जवाव दे दिया। अव ये मेरे पुण्यका अन्त नहीं, तो और क्या है !

रणधीर—(रिपुदमनकी तरफ देखकर) कहो मित्र! ये क्या वखेड़ा है ?

रिपुदमन—कुछ नहीं वहुतसे सर्प मिलकर गरुड़से लड़ा चाहते हैं।

रणधीर—नहीं नहीं ; ऐसा वचन मत कहो। हमसे तो ये सब बड़े हैं। परन्तु बड़े हों या बराबरके हों, लड़ाईकी इच्छा होगी तो हम इनसे जरूर लड़ेंगे। क्षत्री शत्रुके हाथसे मरकर सीधा स्वर्गको जाता है।

सूरतके महाराज—तुम क्षत्रीके नामसे हमारी बराबरके बनते होगे !

रणधीर—जैसे आपके ऊंचे ऊंचे महलोंपर सूर्यकी धूप पड़ती है तैसे ही हमारी गरीब झोंपड़ीमें भी सूर्य भगवान प्रकाश करते हैं। जैसे आपके कलशदार महलों-पर घनघोर घटा जल बरसाती है तैसे हमारी गरीब झोंपड़ीको भी अपनी अपार दयासे सूखा नहीं रखती। हमारा आपका सब संसारी हाल एकसा है और हम तुमको ये झूठा झगड़ा छोड़कर एक दिन अवश्य यहांसे जाना पड़ेगा। परन्तु आपके मुकटमें अभिमानका तुर्रा और लगा है, ये ही आपकी बड़ाई है।

सूरतपति—चेंटीकी मौत आती है जब उसके पर निकलते हैं।

रणधीर—पर वो मरते मरते ईश्वरकी दयासे हाथीका प्राण लेनेके लिये बहुत है।

सब राजा—तो अब हमको आज्ञा दीजिए।

सूरतके महाराज—(सब राजोंसे) आप इसकी तरफ न जायं। मेरा महमान समझकर आप इसको क्षमा करें। हंस दूध और जलमेंसे दूध पी लेता है पर जलकी तरफ दृष्टि नहीं करता।

रणधीर—मुझको अपने अपराध क्षमा करानेकी जरूरत नहीं मालूम होती और बिना अपराध अपराधी बनकर क्षमा कराना क्षत्री कुलको लजाना है। (खड़े होकर तलवारपर हाथ डाला।)

नगरका राजा—(कटार निकालकर) देख, ये कटार अभी तेरे शरीरको अपना म्यान बनावेगी।

सब राजा—(पुकारकर) ऐसे अभिमानीको ये ही दण्ड मुनासिब था।

(नगरके राजाके पास आते ही रणधीरने उससे कटार छीन ली और अपने दुपट्टेसे उसकी मुश्कें बांधकर सभामें खड़ा कर दिया।)

रिपुदमन—जाने बाजके पंजेमें कबूतर फंस गया! देखें अब कौनसा वीर आता है।

(सब राजोंने शिर झुका लिया।)

रिपुदमन—(गम्भीर स्वरसे) ऐसे जीतबपर धिक्कार है! आप बड़े निर्लज्ज हैं! आपको कुछ लाज नहीं आती! आपके बड़े ऐसे ही थे? इसी पराक्रमसे महाराज महानन्दने सिकन्दरका मार्ग रोका था? इसी पराक्रमसे उदयपुरके राणाने नोशेरवांकी बेटी व्याही थी? इसी पराक्रमसे (बाबलके बादशाह) सिल्यूकसने महाराज चन्द्रगुप्तको अपनी बेटी दी थी? इसी पराक्रमसे सब विलायतोंके बादशाह उनको कर देते थे? कभी नहीं। जो राजा मतवाले होकर आठ पहर रणवासमें बैठे रहते हैं, जो राजा वेश्यागामी होकर उनके पीछे पीछे फिरते हैं, जो राजा अपनी प्रजाके दुःख सुखका कुछ विचार नहीं करते, जो राजा अपने दफ्तर या खजाने, तोशेखानेको कभी नहीं सम्हालते, जो राजा अपने बड़ोंकी धरोहर शस्त्र विद्याको जड़ मूलसे भूल गए, उनके जीतबपर धिक्कार है। ऐसे ही लोगोंने दिल्लीके बादशाहको डोला देकर अपने कुलको कलङ्क लगाया है। क्या प्राण यशसे अधिक है? मरना एक दिन सबको है पर यश मिलनेका समय बारंबार नहीं आता। आप लोगोंने ये पांचों शस्त्र क्या भूषण समझकर सजा रक्खे हैं? जो इनके रखनेका कुछ और भी मतलब है तो उसके प्रकट करनेका इससे अच्छा समय कौनसा आवेगा?

(किसीने कुछ जवाब नहीं दिया।)

रिपुदमन—क्या सब लोग अड़ियल टट्टूकी तरह अड़ गए। हे भारतभूमि! तू अपनी सन्तानका ये हाल देखकर क्यों नहीं फटती? हा! किसी नदी या समुद्रमें भी इतना जल नहीं आता जो हम लोग उसमें डूब जायं!

रणधीर—भाई, तुम तो चीतेकेसें वढ़ावे देते हो, मैं अव कहांतक ठैरा रहूं। (नगरके राजाको छोड़कर चल दिया ।)

सरोजनी—(रणधीरको जाता देख ये गजल गाने लगीं ।)

कुश्तए हसरते दीदार हैं यारव किस्के,
नख्ल तावूतमें जो फूल लगे नरगिस्के ।
वह चला जान चली दोनों यहांसे खिस्कें,
उसको थामूं कि इसे पांव पडुं किस किस्के ॥
पांव तुरवत पै मेरी देख संम्हलकर रखना,
चूर है शीशए दिल संगे सितमसे घिस्के !
मुझको मारा ये गैरे हाल तगैय्युर न कि है,
कुछ गुमां और ही धड़केसे दिले मूनिस्के ॥
किस परीरूयसितमगरसे मिला दिल अफसोस,
किस्पै दीवाना हुवा होश गए हैं किस्के ।
चख्त परवानेसें कुर्वान उदू हों यानी,
आग वन जाय हैं वह गिर्द फिरूं हूं जिस्के ॥
नालए रश्क न हो वायसे दरदे सरे गर्म,
गैरके सर पै लगाता है वह सन्दल घिस्के ।
लज्जाते मर्गसे हिजरांसे हुआ है कि खुदा,
ये मजा हो न नसीवोंमें किसी वेहिसके ॥
क्यों न हम शमैकी मानिन्द जलें दूर खड़ें,
जव उदू वायसे गरमी हो तेरी मंजलिसके ।

यार मोमिनसे भि हैं मुद्दए तवैरवां,

वाह अफ़गार तरां अदमगै या विस्के ॥ (गई)

नगरका राजा—(रणधीरके जाते ही) ओ हो ! रणधीरके आनेसे ये सभा ऐसी डिगमिगाने लगी थीं जैसे हाथीके चढ़नेसे नाव डिगमिगाती है। क्या इतने राजोंमें कोई उसको जवाव देनेवाला नहीं था ? उसके आगे सवका रङ्ग ऐसा फीका पड़ गया, जैसे धूपमें रहनेसे पतङ्गका रङ्ग फीका पड़ जाता है। एक रणधीरके आनेसे सव सभाकी ऐसी दशा हो गई, जैसे एक सिंहके आनेसे हाथियोंका झुंड चकित रह जाता है ! क्या ये थोड़ी शर्मकी वात है ? जव अपने राजमें इस वातकी चर्चा फैलेगी तो लोगोंको कैसे मुख दिखाया जायगा ! मैं तो ऐसे जीनेसे मरनेको अच्छा समझता हूं। आप अपने मनमें मेरी ज्यादा वेइज्जती समझते होंगे परन्तु असलमें ये सवकी वेइज्जती हैं ; क्योंकि मैंने सवकी मर्जीसे ये काम किया था।

सूरतपति—मैं उसके अभिमानका किला तोड़ सकता था परन्तु अपने यहांका महमान समझ कर न तोड़ सका। निस्सन्देह आपके वास्ते ये वड़ी शर्मकी वात है। मैं आप लोगोंका मन वढ़ानेके लिए ये वचन देता हूं कि जो वीर रणधीरको पकड़ कर मेरे दरवारमें लावेगा उसको मैं प्रेममोहिनी समेत अपने देशका आधा राज्य दूंगा।

सव राजा—(एक स्वरसे) अच्छा, हम भी अपने प्राणका दाव लगाकर ये वाजी खेलनेको तयार हैं, जो इसमें जीतेंगे तो प्रेममोहिनी समेत आधा राज पावेंगे और मारे गए तो इस कलङ्कसे छूटे। (सूरतके महाराजसे) अच्छा तो अव हमको आज्ञा हो ?

सूरतके महाराज—आपको इस मार्गमें सुख मिले।

(रिपुदमन सिवाय सव गए)

रिपुदमन—(मनमें) ईश्वरने इनको अच्छी बुद्धि दी। अब मुझको अपने जन्म सुफल करनेका समय मिलेगा। मैं बहुत दिनसे चाहता था कि ये नाशवान शरीर किसीके काम आवे सो भगवानने ऐसा बानक बना दिया कि जिसने इस शरीरको बचाया था ये उसीके काम आया और जैसे उसने मेरी विना जाने मेरी सहायता की थी उसी तरह मुझको उसके विना जाने उसकी सहायताका रस्ता मिला चाहा! मेरी देह ऐसे सज्जनके काम आवेगी इससे मेरा अहोभाग्य है।

धन देके जी राखिये, जी दे राखिये लाज।
धन दे, जी दे, लाज दे, एक प्रीतिके काज॥१॥

प्रीति! हे मित्रतारूपी पवित्र प्रीत! तू मेरे मनमें सदा ऐसी ही दृढ़ रहियो। मुझको अपने प्राणघातकी चिन्ता नहीं, पर विश्वासघातकी बड़ी चिन्ता है।

(गया।)

इति तृतीय गर्भाङ्क।

——*——

अथ चतुर्थ गर्भाङ्क ।

स्थान, सूरतके महाराजका नजर बाग ।

(प्रेममोहिनी और मालतीका प्रवेश)

मालती—न जाने तुम्हारा हार कहां गिर पड़ा होगा। तुम इस अन्धेरी रातमें वृथा भटकती हो।

प्रेममोहिनी—मेरे जान तो वो यहां अवश्य मिल जायगा। तू जरा अच्छी तरह देखभाल कर।

मालती—राजकुमारी, बुरा न मानों तो एक बात कहूं।

प्रेममोहिनी—सखी! मैं तेरी कौनसी बातका बुरा मानती हूं।

मालती—मेरे जान तो, तुम हार ढूंढ़नेका मिस करके रणधीरसिंहको ढूंढ़ने यहां आई हो।

प्रेममोहिनी—तैने ये बात कैसे जानी ?

मालती—इस समय तुम पत्तोंकी आहट सुनकर चारों तरफ देखने लगती हो।

प्रेममोहिनी—(मनमें) आग वस्त्रसे नहीं ढकी जाती। (प्रकट) तेरी बात झूठ है, पर उसको सच मान लें तो तेरे विचारमें कैसी रहे ?

मालती—मेरे विचारमें ये बात अच्छी है पर ये रीति अच्छी नहीं।

प्रेममोहिनी—क्यों ?

मालती—तुमसी राजकन्याका आधीरातके समय एकान्तमें परपुरुषसे मिलना तुम्हारे कुल और गुणोंको कलङ्क लगाता है।

प्रेममोहिनी—"पर"की जगह "निज" समझकर विचारकर।